संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

।। ऋषि प्रसाद ।।

: ११
क : ९३
तम्बर २०००
हिन्दी

**पूज्यश्री का
आत्म-साक्षात्कार दिवस
आसोज सुद दूज
२९ सितम्बर २०००**

पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

नहीं जन्म हुआ न मरण मेरा, न मुक्त हुआ न बंधन था।
अलख निरंजन रूप मेरा, अब तक मुझको मालूम न था ।।
ब जाना अपने आपको, तब नष्ट हुआ सब मोह मेरा।
'मैं' ही 'मैं' हूँ न अन्य कोई, ऐसा अनुपम है रूप मेरा ।।

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ११
अंक : ९३
९ सितम्बर २०००
सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा
मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में

(१) वार्षिक : रू. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रू. ३००/-
(३) आजीवन : रू. ७५०/-
(डाक खर्च में वृद्धि के कारण)

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 25
(२) पंचवार्षिक : US $ 100
(३) आजीवन : US $ 250

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.
E-Mail : ashramamd@ashram.org.
Web-Site : www.ashram.org

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं विनय प्रिन्टिंग प्रेस, अमदावाद में छपाकर प्रकाशित किया।

अनुक्रम

SONY चैनल पर 'संत आसारामवाणी' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

आत्म-साक्षात्कार की घड़ियाँ

[पू. बापू का आत्म-साक्षात्कार दिवस : २९ सितम्बर २०००]

आसोज सुद दो दिवस, संवत् बीस इकीस ।
मध्याह्न ढाई बजे, मिला ईस से ईस ॥
पूर्ण गुरु किरपा मिली, पूर्ण गुरु का ज्ञान ।
आसुमल से हो गये, साँईं आसाराम ॥

पूज्यश्री के आत्म-साक्षात्कार दिवस की बधाई हो ! पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी बापू के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम हो !

अपने स्वरूप का, अपनी आत्मा का पता चल जाना यह बड़े-में-बड़ी उपलब्धि है। इसके अतिरिक्त जगत की सारी उपलब्धियाँ दिखनेमात्र की हैं। यदि कोई केवल तीन मिनट के लिए आत्म-साक्षात्कार की घड़ियों में स्थित हो जाए तो उसका दुबारा जन्म नहीं होता, वह सदा के लिए जन्म-मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है। अरे ! मुक्त क्या होता है, उसका यह अनुभव हो जाता है कि :

मुझे मेरी मस्ती कहाँ लेकर आई,
जहाँ मेरे अपने सिवा कुछ नहीं है।
पता जब चला मेरी हस्ती का मुझको,
कहीं मेरे अपने सिवा कुछ नहीं है ॥

देखने के विषय अनेक हैं, पर देखनेवाला द्रष्टा एक है। सुनने के विषय अनेक हैं किन्तु सुननेवाला एक है। चखने के विषय अनेक हैं, पर चखनेवाला एक है। मन के संकल्प-विकल्प अनेक हैं लेकिन मन का द्रष्टा एक है। बुद्धि के निर्णय अनेक हैं, पर उसका अधिष्ठान एक है। उस एक को जब 'मैं' रूप में देख लिया, अनंत ब्रह्मांडों में व्यापक रूप से जिस समय देख लिया वे घड़ियाँ सुहावनी हैं, मंगलकारी हैं। वे ही आत्म-साक्षात्कार की घड़ियाँ हैं।

वे घड़ियाँ ही प्रत्येक जीव का परम लक्ष्य हैं। हरेक जीव को देर-सबेर अपना वह लक्ष्य प्राप्त करना ही है। आप सभी में उस सुहावनी घड़ी के लिए जिज्ञासा जागृत हो !

सच्ची उपलब्धि आत्म-साक्षात्कार है, बाकी उपलब्धियाँ प्रतीतिमात्र हैं, नश्वर हैं, प्राप्ति नहीं। आत्म-उपलब्धि ही शाश्वत् है।

'ऋषि प्रसाद' स्वर्णपदक प्रतियोगिता

'ऋषि प्रसाद स्वर्ण पदक प्रतियोगिता' के अंतर्गत पहले १० सेवाधारियों को पूज्यश्री के ६०वें अवतरण दिवस (अप्रैल २००१) पर पुरस्कृत किया जायेगा। भारत के सभी आश्रम, योग वेदान्त सेवा समितियाँ तथा 'ऋषि प्रसाद' सेवाधारीगण प्रसंगानुरूप भव्य आयोजन में जुट गये हैं।

'ऋषि प्रसाद स्वर्णपदक प्रतियोगिता' में उत्साह से संलग्न सेवाधारियों में से पहले दस जिन सेवाधारियों की सदस्य संख्या वर्त्तमान में अधिकतम चल रही है उन भाग्यशालियों के नाम निम्नानुसार हैं :

क्रम	नाम	शहर
१.	श्री विश्वनाथ अग्रवाल	दिल्ली
२.	श्रीमती जया कृपलानी	भोपाल
३.	श्री वजुभाई ढोलरिया	सूरत
४.	श्री वृन्दावन गुप्ता	दिल्ली
५.	श्री अतुलभाई विठलाणी	राजकोट
६.	श्री घनश्याम करनानी	दिल्ली
७.	श्री महेशचंद्र शर्मा	कलकत्ता
८.	श्री त्रिलोक सिंह	हिसार
९.	श्री दिनेश भाई जोशी	ओढव-अमदावाद
१०.	श्रीमती कावेरी सरकार	जामनगर

...तो आएँ... देर न करें... अभी भी काफी समय है। आप भी इस प्रतियोगिता में सहभागी होकर दैवी कार्य में जुट जायें और आज ही अपना सेवाधारी क्रमांक और रसीद बुकें 'ऋषि प्रसाद' मुख्यालय, अमदावाद से प्राप्त करें।

नोट : इस प्रतियोगिता में सेवाधारी द्वारा बनाई गयी एक आजीवन सदस्यता दो वार्षिक सदस्यता के बराबर मानी जायेगी।

ब्रह्मचर्य व एकाग्रता का सामर्थ्य

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

महाराष्ट्र के एक छोटे-से गाँव में हरिदासजी नाम के एक संत हो गये। बाल्यकाल में उनके माता-पिता ने उनको सत्संग की कुछ बातें सुनाई थीं। १५-१६ साल की उम्र रही होगी जब वे तैलंग साधु के संपर्क में आये। जब साधु मिलते हैं तो वे साधना की बात करेंगे, संयम की बात करेंगे। तैलंग साधु से दीक्षा ली तो उन्होंने संयम, प्राणायाम सिखाया और कहा : ''बेटा ! नजर कहीं भी जाय तो तुरंत नासाग्र दृष्टि करना। अपने से बड़ी हो तो उसको माता समान, बराबरी की हो तो बहन के समान, नन्हीं-मुन्नी हो तो कन्या के समान देखना। अपने विचारों को ब्रह्मचर्य के पवित्र गुणों से संपन्न रखना।''

गुरुआज्ञा को ईश्वर की आज्ञा के तुल्य मानकर वे हरिदासजी लग गये हरि के उस परम प्रेम में, ध्यान में। प्राणायाम नियमित करते, वाणी का संयम करते, अमावस्या, एकादशी, पूनम के दिन उपवास करते। थोड़ा दूध लेते। बाकी के दिनों में चावल, मिश्री, घी, दूध आदि का उपयोग करते।

प्राणायाम से चंचल मन शांत होता है, अपने आपमें बैठता है। इससे सामर्थ्य आता है। ब्रह्मचर्य व प्राणायाम से शरीर की रोगप्रतिकारक शक्ति बढ़ती है। मन के रोग भी मिटते हैं, बुद्धि की चंचलता भी मिटती है और आत्मबल का विकास होता है।

पहले जो कुछ तीर्थ-व्रतादि उनको करना था, उन्होंने प्रयाग, काशी आदि तीर्थों की यात्रा कर ली। जहाँ अनुकूल पड़ा वहीं रह लिये। बड़ी विलक्षण शक्तियाँ उनमें संचित होने लगीं।

वे संत प्रयागराज में यमुना तट पर थे। किसी वृक्ष के नीचे बैठे थे। पास में मंदिर था। उन संत महापुरुष का प्रभाव, शांति देने का उनका सामर्थ्य, सारगर्भित बोलने की उनकी शैली आदि बातों ने भक्तों की भीड़ को आकर्षित किया। भक्तगण प्रायः उनको घेर के बैठे रहते थे।

इन्हीं दिनों एक पादरी अपने चमचों के साथ भीड़ में घुस बैठा था। बाबाजी ने देखा कि पादरी थोड़ी देर बैठा लेकिन उसको तो अपने ईसाईयत का प्रचार करना था अतः वह बीच में खड़ा होकर बकने लगा कि : ''यह ध्यान क्या होता है ? प्राणायाम क्या होता है ? इन ब्रह्मचर्य की बातों से क्या काम होता है ?'' वह हमारे हिंदू धर्म के देवी-देवताओं, साधुओं एवं स्वयं हिंदू धर्म को खरी-खोटी सुनाने लगा। सन् १८३० की यह बात है। उस समय अंग्रेज शोषकों का शासन था। अतः वह बकने लगा और अपने धर्म ईसाईयत का डिम-डिम बजाने लगा। वे महापुरुष और उनके संयत साधक काफी देर तक शांत रहकर सहिष्णुता का परिचय देते रहे।

महापुरुष चमत्कार दिखाते नहीं, लेकिन कभी-कभी उनके द्वारा कुछ हो जाता है। ...तो महाराज ने कहा : ''तुम बोलते हो कि तुम्हारे जीसस भगवान थे और वे पाँच रोटियों को ढँककर बाँटते गये और कइयों को खिलाया तो इससे क्या हो गया ? यह तो मन की एकाग्रता से कुछ सिद्धियाँ आ जाती हैं। जादू से अथवा योग से रोटियाँ निकाल दीं तो क्या ? पाँच सौ आदमियों को भरपेट रोटियाँ खिला दीं तो क्या ? इसमें क्या बड़ी बात है ? योग केवल लोगों को रोटियाँ खिलाने के लिए थोड़े ही है ? पादरी ! तू जीसस को इसलिए भगवान मानता है, इसलिए बड़ा मानता है कि केवल पाँच रोटियों से उन्होंने पाँच सौ आदमियों को खिला दिया तो ले, मेरे पास तो पाँच रोटियाँ भी नहीं हैं, छूमंतर करने के लिये कोई जादू भी नहीं है। मेरे पास तो योग है जो परमात्मा से एकत्व करने के लिये है। ...और अब देख ले।''

ऐसा कहकर उन महाराज ने अपने खाली झोले

में हाथ डाला और उसमें से वे पूरी, पकवान, व्यंजन निकाल-निकालकर फेंकते गये । देखते-ही-देखते व्यंजनों का ढेर लगा दिया । पादरी दंग होकर टुकुर-टुकुर देखता ही रह गया ! वहाँ पर एकत्रित लोग भी आश्चर्यमुग्ध हो गये ! हद हो गई ! खाली झोला था और पूरी-पकवानों का इतना ढेर ! महाराज निकाल-निकालकर बस, फेंकते ही रहे ।

...लेकिन पादरी को तो अपना उल्लू सीधा करना था । वह बोला : ''यह तो तुम्हारे पास नीचे कुछ छुपा होगा । झोले के नीचे क्या छुपाया है ?''

हरिदासजी ने झोला ऊपर उठाते हुए कहा :

''नीचे तो फर्श है, मूर्ख ! क्या छुपाया है ?''

पादरी ने कहा : ''कुछ होगा अवश्य । यह हम सच नहीं मानते । हाँ ! हमारी ब्रेड, बटर, सेन्डविच निकालकर दिखाओ तो हम मानेंगे ।''

हरिदासजी महाराज ने कहा : ''देखो, अंडा, शराब और मांस को छोड़कर तू दुनिया की कोई भी चीज माँग तो अभी-अभी निकाल देते हैं । ये पावरोटी ले... ये बिस्किट ले...'' इस प्रकार वे देते गये... देते गये... बिस्किटों एवं पावरोटियों का ढेर कर दिया ।

पादरी ने देखा कि अब वह मुँह दिखाने के काबिल नहीं रहा । वह नाव में बैठकर यमुनाजी के उस पार जाने लगा । हरिदासजी ने कहा : ''अरे पादरी का बच्चा ! तू हिंदू धर्म को गालियाँ देता है, हिंदू संस्कृति को नीचा दिखाता है और अपनी डिम-डिम बजाता है !'' ऐसा कहकर वे पादरी के पीछे पड़े ।

पादरी तो नाव में बैठकर जाने लगा और हरिदासजी उसके पीछे-पीछे यमुनाजी के जल के ऊपर पैदल ही चलने लगे । यह देखकर पादरी हक्का-बक्का रह गया कि मैं तो नाव में और ये पानी के ऊपर पैदल चलकर आ गये ! जब वह यमुनाजी के उस किनारे उतरा तो महाराजजी भी उस किनारे पहुँच गये । अब तो उसने हाथ जोड़े और अपनी गलती के लिये बहुत शरमिंदा हो गया ।

महाराजजी ने कहा : ''कोई बात नहीं । ये चीजें तो तुम्हारे मनःकल्पित जगत की हैं । यह सारा जगत मनोमय है । मन जितना एकाग्र होता है, उतना उसमें सामर्थ्य आता है । यह चमत्कार तो तेरे जैसे बुद्धुओं को हिंदू धर्म की महानता दिखाने के लिये किया । वास्तव में तो हिंदू धर्म की महानता इन चमत्कारों में निहित नहीं है, बल्कि सनातन सत्य का साक्षात्कार कराने में इसकी महानता निहित है ।''

उन महापुरुष के पास कोई गरीब सूरदास आया तो महाराज बोले : ''अच्छा... कोई बात नहीं । देखने लग जा ।'' जरा-सा हाथ घुमा दिया और वह सूरदास देखने लग गया । उसकी आँखों में रोशनी आ गई । वह तो धन्य-धन्य हो गया !

ऐसे ही कोई अशांत व्यक्ति आता और महाराजजी उसको साहस व सांत्वना के दो मीठे वचन सुना देते तो उसकी अशांति मिट जाती । किसी के बच्चे ऐसे-वैसे होते और महाराजजी जरा आशीर्वाद दे देते तो वे ठीक हो जाते । इस प्रकार हरिदासजी महाराज के सत्संग और उनकी करुणा-कृपा से बहुत लोगों को लाभ हुआ । सनातन धर्म की निंदा करनेवाले पादरियों की आँधी को हटाने में महाराज का बहुत-बहुत योगदान था । उन्होंने समाज में सनातन धर्म की महिमा के प्रति जागृति लाई तो हिंदुओं को पता चला कि : 'पादरी लोग हमें गुमराह करते हैं वरना हम हमारी भारतीय संस्कृति में पैदा हुए हैं यह तो हमारा सौभाग्य है ।'

राजा रणजीत सिंह हरिदासजी महाराज के संपर्क में आये तो वे सपरिवार, नाते-रिश्तेदारों सहित महाराजश्री से दीक्षा लेकर अपना भाग्य बनाने के रास्ते चल पड़े ।

हरिदासजी महाराज ने धारणा का खूब अभ्यास किया था इसलिये संकल्प करके कुछ भी कर लेते थे । संकल्पबल से ही उन्होंने घमंडी पादरी को नतमस्तक कर दिया, निगुरों को सगुरा बना दिया और अभक्तों को भक्ति का दान दे दिया । वे भी एक युवक ही तो थे ! ऐसे तो कई युवक हैं । युवक अपनी शक्ति को पहचानते नहीं । बाहर घूम-घूमकर वे लाचार हो जाते हैं क्योंकि ब्रह्मचर्य की महिमा नहीं जानते, प्राणशक्ति की महिमा नहीं जानते, मौन की महिमा नहीं जानते, एकाग्रता की महिमा नहीं जानते और अपने अंदर ईश्वरीय सनातन सत्य भरा है यह वास्तविकता वे बेचारे नहीं जानते इसीलिये खप जाते हैं । उनके पास कई 'सर्टिफ़िकेट' होते हैं फिर भी चार पैसे की नौकरी के लिये वे भटकते-फिरते हैं । कोई व्यक्ति, कंपनी या संस्था चार नौकर रखने के लिए विज्ञापन देते हैं तो सैकड़ों बेरोजगार

लोग आवेदन पत्र भेजते हैं। दो-पाँच आदमियों की जरूरत होती है वहाँ सैकड़ों आदमी लाइन में लगते हैं नौकरी पाने के लिए। ...और इन महाराज में कितना सामर्थ्य ! कोई सर्टिफ़िकेट नहीं, कोई प्रमाणपत्र नहीं, कोई पद नहीं फिर भी ब्रह्मचर्य व योग के बल से वे इतनी समाजसेवा एवं देशसेवा करने में सक्षम हो गये।

यौवन-सुरक्षा... अपने सर्वस्व की सुरक्षा... सर्वेश्वर को पाने की योग्यता की सुरक्षा... यौवन-सुरक्षा। माता-पिता व पत्नी से वफादार रहने की कुंजी... यौवन-सुरक्षा। अतः **'युवाधन सुरक्षा अभियान'** चलानेवाले पुण्यात्माओं के साथ आप भी कंधे-से-कंधा मिलाकर मानवता की सेवा और सुरक्षा में साझीदार बनें। आप भी पाँच-पचीस **'यौवन सुरक्षा'** पुस्तक इस ढंग से बेचें या बाँटें कि सामनेवाला व्यक्ति इसे पाँच बार पढ़ने को सहमत हो जाय।

जूनागढ़ के प्रसिद्ध विद्रोही डाकू (गुजरात में जिसे 'बहारवटिया' कहते हैं) कादु मकराणी उर्फ कादरबक्ष ने एक बार रात के करीब १० बजे उना तहसील के तड़ नामक गाँव को लूटने के लिए उस पर आक्रमण किया। उसे धन की आवश्यकता थी इसलिए वह एक बनिये के घर पहुँचा। घर के सभी पुरुष तो पीछे की दीवार फाँदकर भाग गये लेकिन एक विवाहित बेटी अकेली रह गई। उसके शरीर पर स्वर्ण के आभूषण चमक रहे थे। कादरबक्ष बाहर बरामदे में खड़ा रहा और उसके साथी घर के भीतर लूट-पाट करने लगे। इतने में एकाएक उस युवती की चीख सुनाई दी। कादु ने तुरन्त ही गर्जना की : ''हो वलाती ! खबरदार !''

उसके एक साथी ने उस अकेली वणिक युवती का हाथ पकड़ा था। कादु ने उसे वलाती इसलिए कहा कि उसकी टोली में खुद के सिवा और कौन-कौन थे उनके नामों का पता न चले।

कादु तुरन्त ही घर के भीतर गया और अपने साथी को हुक्म दिया : ''बाहर आओ।''

शरमिंदा होता हुआ वह साथी दूसरे कमरे से बाहर आया और कादु के सामने खड़ा रहा। उस युवती को आश्वासन देते हुए कादु ने कहा : ''बेटी ! डरना मत। हम तेरा घर नहीं लूटेंगे। तू भीतर चली जा।''

कादु बाहर आया और गुनहगार को कड़ी आँख से देखते हुए कहा : ''चलो गाँव से बाहर।'' मानों उसकी कड़ी नजर अपराधी के हृदय को चीर डालती थी। अपने साथी को आगे कर उसने एक बार उस घर में देखा। एक दीया जल रहा था और दीये की लौ की तरह थरथराती हुई वह महिला खड़ी थी। उसके घर को लूटे बिना ही सब बाहर चले गये। गाँव के बाहर जाकर उस कामी साथी को कड़ी आँख दिखाते हुए कादरबक्ष ने कहा : ''कादु मकराणी छोटी उम्र की महिला को बेटी, समान उम्र की महिला को बहन और बड़ी उम्र की महिला को माँ समझकर चलता है। कादरबक्ष पाक मुसलमान है। तेरे जैसा हैवान मेरे साथ नहीं चल सकता। मैं तुझे वहीं खत्म कर देता, एक पल की भी देर नहीं करता लेकिन तेरी लाश वहाँ छोड़कर जाना ठीक नहीं होता। मुझे ही तेरी लाश को उठाना पड़ता। मुझे दुःख है कि मैं तुझे मार नहीं सका। चला जा यहाँ से। ले ये तेरे खर्च के पैसे।''

पैसे देकर कादु ने उस समय उसे भगा दिया। अपनी स्त्री को तो कादु ने उसके वतन भेज दिया था और भाइयों के साथ मिलकर अन्यायी शासन के खिलाफ विद्रोह करने के लिए वह लूटपाट करता था।

एक बार देर रात को लोढवा गाँव के किसी राजपूत के घर में डाका डालने के लिए कादु गया तो एक अर्धनग्न अवस्था में सोई हुई स्त्री उठकर भागने लगी। कादु उसकी ओर पीठ करके खड़ा रहा और बोला :

''बहन ! तेरे कपड़े ठीक तरह पहन ले।''

पर वह अबला डर के मारे स्तब्ध हो गई थी अतः कुछ कर न सकी तब कादु फिर से बोला :

''बहन ! अपने घर का दरवाजा बंद कर दे।''

इतना कहकर वह बाहर चला गया। उस घर को उसने नहीं लूटा। काम-वासना की तृप्ति के लिए तो कदापि नहीं लेकिन गहने लूटने के लिए भी ये 'बहारवटिये' लोग स्त्री को स्पर्श करना अपनी नीति के विरुद्ध मानते थे। लूटते समय दूर खड़े रहकर स्त्री से वे इतना ही कहते थे : ''बहन ! तेरे गहने उतार दे।''

संयम-सदाचार के कारण ही ऐसे विद्रोही डाकू सैन्यबल से संपन्न बड़ी-बड़ी रियासतों से भी लोहा लेते थे। अनेक कष्टों-मुसीबतों को झेलते हुए राजाओं को संधि करने को मजबूर कर सकते थे।

ब्रह्मचर्य और ऊँचे संयम-सदाचार का सिद्धांत डाकू जैसों को भी धन्य बना देता है।

['The Times of India' : 30 August, 2000.]

"कोई भी धर्म कट्टर हठधर्मिता नहीं सिखाता..."

– संत श्री आसारामजी बापू

४० दिनों की गहन समाधि के बाद २३ वर्षीय आसुमल को अपने सद्गुरु स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज के आशीर्वाद से आसो शुक्ल पक्ष द्वितीया, वि. सं. २०२१ के दिन दोपहर ढाई बजे आत्म-साक्षात्कार हुआ और फिर वे 'संत श्री आसारामजी बापू' के नाम से प्रसिद्ध हुए। भारतीय, विदेशी और विदेशों में बसे हुए भारतीय सभी उनका अमदावाद स्थित आश्रम देखने जाते हैं और राजनेता, संत, ऋषि-मुनि, मध्यमवर्गीय, धनी, चमक-दमकवाले और गरीब-से-गरीब लोग शांति एवं प्रसन्नता पाने तथा अपनी अंतहीन समस्याओं के समाधान हेतु बड़ी भारी संख्या में आकर उनके सत्संग-प्रवचनों का लाभ लेते हैं।

'The Times of India' समाचार पत्र की ओर से पत्रकार सीमा बर्मन ने पूज्यश्री से जो प्रश्नोत्तरी की वह संक्षेप में इस प्रकार है :

प्रश्न : ''बापूजी ! मुझे पता है कि विश्व में व्याप्त हिंसा का हल ढूँढ़ने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा न्यूयार्क में आयोजित की जानेवाली आध्यात्मिक नेताओं की सभा में आपको आमंत्रित किया गया है...''

उत्तर : ''यद्यपि मैं न्यूयार्क नहीं जा रहा हूँ किन्तु मेरे सन्देश के साथ अपने शिष्य स्वामी सुरेशानन्द को भेज रहा हूँ।

पश्चिम के स्पंदन (Vibrations) बहुत निषेधात्मक हैं। लेकिन यह अच्छा है कि आध्यात्मिक मनोवृत्तिवाले लोग एक छतरी के नीचे इकट्ठे हो रहे हैं। इस पवित्र भूमि भारत के ऋषि-मुनि वर्षों पहले से ही शांतिपूर्ण जीवन जीने के नियम निर्धारित कर चुके हैं। एक राजा या नेता में कोई स्वार्थ नहीं होना चाहिए। उसकी दृष्टि में अपने सगे-संबंधियों की अपेक्षा समाज का महत्त्व ज्यादा होना चाहिए। क्या आज के राजनेतागण अपने वैयक्तिक जीवन को भगवान राम की तरह कुर्बान करने के लिए तैयार हैं ? महात्मा गाँधी ने 'सादा जीवन और उच्च विचार' (Simple living and high thinking) की हिमायत की थी, क्या किसीको इसमें रुचि है ?

फिल्मों एवं प्रचारतंत्र में हिंसा और अश्लीलता (Sex) पर प्रतिबंध लगाओ और दृश्य-श्राव्य प्रचार माध्यमों (Media) के द्वारा बच्चों को सादगीपूर्ण जीवन एवं नैतिक मूल्यों के लाभ बताओ। क्या फिल्म-निर्माता इससे सहमत होंगे ? कोई भी संत उन्नति, विज्ञान, विवाह, धन-संपत्ति और सफलता के विरुद्ध नहीं होते किन्तु यह सब नैतिक मूल्यों की कीमत पर नहीं होना चाहिए।''

प्रश्न : ''आज के वैज्ञानिक जगत में अध्यात्मवाद कहाँ खड़ा है ?''

उत्तर : ''आइन्स्टीन अपने स्कूली शिक्षाकाल में औसत दर्जे से भी निम्न दर्जे के विद्यार्थी थे। बाद में वे महान् भौतिकविद् बने जिन्होंने गणितीय विधि से सिद्ध किया कि प्रकाश की गति ही ब्रह्माण्ड में एकमात्र स्थाई इकाई (Constant factor) है। जब जमनालाल बजाज के दामाद आर. नारायण ने उनसे उनकी सफलता का राज़ पूछा तो आइन्स्टीन ने उन्हें अपना ध्यान-कक्ष दिखाया जिसमें वे महर्षि पतंजलि के योग-ध्यान प्रणाली के अनुसार साधना करते थे और उन्होंने चार वर्षों तक ब्रह्मचर्य का पालन किया था। गुरुत्वाकर्षण के नियम और विद्युत की खोजें की गई हैं किन्तु वे वस्तुतः हैं क्या, यह किसीको पता नहीं। वैज्ञानिक अब स्वीकार करने लगे हैं कि आणविक ऊर्जा केवल Mind Stuff है। हमारे शास्त्रों ने इसे बहुत पहले ही घोषित कर रखा है कि : 'यह भौतिक संसार एक ही माया के आधारभूत नियम-कारण-कार्य, क्रिया-प्रतिक्रिया के तहत चल रहा है।' मानव जाति को एकमात्र कार्य जो सुपुर्द किया गया था वह था माया को पार करना और सृष्टि के रहस्य को उजागर करना। बौद्धिक विश्लेषण की चाहे कितनी

भी ऊँची क्षमता हो, उससे इस माया को भेदा नहीं जा सकता क्योंकि माया अविद्या है। सृष्टि का वस्त्र (आवरण) माया है । संत माया के पार देखते हैं और अपनी चेतना को परमात्मा में विलीन कर चुके होते हैं ।''

प्रश्न : ''क्या भक्त और ईश्वर के बीच माध्यम के रूप में गुरु जरूरी हैं ? एक सच्चे गुरु की पहचान कैसे होती है ?''

उत्तर : ''सद्गुरु एक आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शक होते हैं जो आपको (साधक को) भौतिकवादी संसार के आकर्षणों एवं गुप्त कठिनाइयों से बचाते हैं । जैसे एक सद्गुरु पाना सौभाग्य की बात है वैसे ही सद्गुरु को सत्शिष्य मिलना भी कठिन होता है । विवेकानन्द को एक भी सत्शिष्य नहीं मिल सका । इस जगत में गुरु का काम होता है मनुष्यमात्र के दुःखों को कम करना फिर वे चाहे आध्यात्मिक साधनों जैसे ध्यान-प्राणायाम-मंत्र से करें अथवा सत्संग एवं बौद्धिक उपदेशों से करें अथवा संकल्पबल आदि के माध्यमों से करें अथवा आपके पूर्वकर्मों से उत्पन्न रोग को अपने ऊपर लेकर करें । परम आत्मा में निमग्न गुरु का तेजोवलय (Aura) और आध्यात्मिक स्पन्दन करोड़ों लोगों में आनन्द का संचार करते हैं जो अमूल्य है, जिसे कितना भी धन खर्च करके खरीदा नहीं जा सकता । एक सच्चे संत कभी भी धन के पीछे नहीं दौड़ते और उनके भक्त जो कुछ भी धन भेंटस्वरूप समर्पित करते हैं उसे वे समाज के कल्याणार्थ खर्च कर देते हैं ।''

प्रश्न : ''कितने ही चमत्कार आपसे जुड़े हैं । आपके कारण कितने ही लोगों को जीवनदान मिल चुका है । यह सब कैसे हो रहा है ?''

उत्तर : ''यह भक्त की श्रद्धा ही है जो इसे (चमत्कार को) संभव बनाती है । गुरु देहरूप में होते हैं अतः उनमें पूर्ण श्रद्धा होना कठिन होता है। प्रत्येक व्यक्ति में आश्चर्यजनक सुषुप्त अनंत शक्तियाँ निहित हैं किन्तु उन्हें अपने अहं से ऊपर उठने की जरूरत है । जो कोई भी माया को पार (Surpass) कर सकता है, ईश्वर के साथ तादात्म्य कर सकता है वह किसी भी लक्ष्य तक पहुँच सकता है । उसके स्मरणमात्र से भक्त के जीवन में आनंद का प्राकट्य हो सकता है । सच्चे संत अपनी केवल संकल्पशक्ति से यानी सृष्टिकर्त्ता के साथ अपने तादात्म्यमात्र से इस स्वप्न-जगत में परिवर्तन लाने की क्षमता रखते हैं । किसी में भी चमत्कारिक शक्तियों का होना इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि वह ईश्वर को पा चुका है । अपने सद्गुरु में श्रद्धा रखो, उनकी पूजा करो, उनके सत्संग में जाओ तो वे तुम्हारे दुःखों को निश्चित रूप से कम कर देंगे । आपको अपने रसोइये में श्रद्धा है । आप कैसे जानते हैं कि आपके रसोइये ने आपके भोजन में जहर, मांस, पसीना या थूक नहीं मिलाया है ? केवल यही न कि आपको उसमें श्रद्धा है । आपको अपने ड्राइवर व डॉक्टर में उनकी असफलताओं के बावजूद भी श्रद्धा होती है ।''

प्रश्न : ''क्या धर्म झगड़ों और युद्धों का कारण है ?''

उत्तर : ''कोई भी धर्म कट्टर हठधर्मिता नहीं सिखाता । वास्तव में आध्यात्मिक रूप से उन्नत व्यक्ति अन्य धर्मों के प्रति हमेशा उदार होगा । धर्मान्तिरण गलत है और इसे रोक दिया जाना चाहिए । पहले आप आत्मा हैं, बाद में शरीर हैं, फिर हिंदू या मुसलमान, ईसाई, जैन, सिख या पंजाबी हैं । 'यह धर्म उस धर्म की अपेक्षा अच्छा है...' ऐसा प्रतिपादन करने में अपना समय बरबाद न करो बल्कि अपनी आत्मा को खोजो और केवल उसका ध्यान करो ।''

प्रश्न : ''युवावर्ग इसकी अपेक्षा कमाना और मौज करना पसंद करेगा । कुछ ही युवक ऐसे हैं जो साधुओं और गुरुओं में विश्वास रखते हैं ।''

उत्तर : ''क्या युवावर्ग सुखी है ? क्या धनी लोग सुखी हैं ? क्या उन्हें निराशा, मानसिक अवसाद, चिन्ता, तनाव, बोझिलपने की शिकायत नहीं है ? युवानी की सुंदरता अनुशासन में निहित है । जितना ही अनुशासित जीवन उतना ही सफल जीवन । आप जितना कमाना चाहते हो उतना कमाओ । अच्छे उद्देश्यों के लिए अपना धन खर्च करो । धन का सदुपयोग करो, उपभोग नहीं । जैसे आप एक अच्छा स्कूल, ट्यूटर, डॉक्टर खोजने के लिए समय लगाते हो वैसे ही एक सच्चे गुरु को खोज लो । 'स्कंद पुराण' में भगवान शिव पार्वतीजी से कहते हैं : 'जिनके दर्शनमात्र से मन प्रसन्न होता है, अपने आप धैर्य और शांति आ जाती है वे परम गुरु हैं । अनेक जन्मों में किये हुए पुण्यों से ऐसे महागुरु

प्राप्त होते हैं। उनको प्राप्त कर शिष्य पुनः संसारबन्धन में नहीं बँधता अर्थात् मुक्त हो जाता है। सर्व प्रकार के सन्देहों का जड़ से नाश करने में जो चतुर हैं, जन्म, मृत्यु तथा भय का जो विनाश करते हैं वे 'परम गुरु' कहलाते हैं, 'सद्गुरु' कहलाते हैं।'

एक सच्चे गुरु अपने भक्तों को सांसारिक इच्छाओं-आकर्षणों से दूर हटाने के लिए सर्वोत्कृष्ट पुरुषार्थ करते हैं और उन्हें अक्षय सुख और आनन्द की प्राप्ति का मार्ग दिखलाते हैं। प्रत्येक जीव (Soul) का एकमात्र उद्देश्य ईश्वर को प्राप्त करना है। अगर आप अपने बुढ़ापे का इन्तजार करते हैं तो आपके पास न तो कोई समय बच पायेगा और न ही ऐसा पुरुषार्थ करने के लिए आपमें संकल्प या शक्ति रह जायेगी।''

प्रश्न : ''क्या ईश्वर को पाना कठिन कार्य नहीं है ?''

उत्तर : ''नौकरी पाना कठिन है किन्तु ईश्वर तो आपके साथ है। आपके अंतःकरण से संपूर्ण मलिनताओं को दूर करो और फिर वहाँ ईश्वर को अपनी पूरी महिमा में विराजमान पाओगे। ६ वर्ष का बालक ध्रुव ईश्वर को पा सकता है तो आप क्यों नहीं ? दृढ़ संकल्प करो।''

प्रश्न : ''भारतीय समाज के लिए आपका क्या संदेश है ?''

उत्तर : ''हाँ... अध्यात्मवाद पुराना (Old-fashioned) यानी आज के समय में अप्रासंगिक या अप्रस्तुत नहीं है। पश्चिम के तरफ की अंधी दौड़ में अपनी समृद्ध आध्यात्मिक विरासत को तिरस्कृत न करो। वासना प्रेम नहीं है। अपनी वीर्यशक्ति (Sexual energy) का संरक्षण करो। यह प्रजनन के लिए है, दुरुपयोग के लिए नहीं है।

ईश्वर ही आपका सच्चा मित्र है। केवल ईश्वर पर भरोसा रखो और किसी पर नहीं। उसीने आपकी माता को जन्म दिया है। उसका प्रेम करोड़ों-करोड़ों माताओं के प्रेम के तुल्य है। वह प्रतिक्षण आपके साथ है। उसके अस्तित्व के लिए प्रमाण की खोज न करो वरन् उसकी उपस्थिति की समीक्षा करो और तब आप पाओगे कि जब आप पाप कर रहे थे तब भी वह आपके साथ था। अपने सारे चैनलों (ऊर्जा-संग्राहक स्रोतों) को खोल दो और उसे प्राप्त करो। वह आपका इंतजार कर रहा है।''

संत-स्वभाव

❋ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❋

'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' में भगवान श्रीराम ने वशिष्ठजी महाराज से पूछा : ''हे भगवन् ! जिनको आत्म-साक्षात्कार हुआ होता है, वे कैसे हो जाते हैं ? उनका आचार कैसा होता है ? यह मुझसे कहिये।''

तब आत्मवेत्ता महापुरुषों के स्वभाव का वर्णन करते हुए वशिष्ठजी महाराज कहते हैं :

''उनका स्वभाव मित्रभाव का होता है, बल्कि पाषाण से भी उनकी मित्रता होती है। बंधुओं में उनकी आसक्ति नहीं होती है। अपने बन्धुओं को वे ऐसा जानते हैं जैसे वन के वृक्ष और पत्ते होते हैं। जैसे, जंगली पशुओं को अपनी संतानों से मोह नहीं होता, वैसे ही वे भी स्त्री-पुत्रादिक से मोह नहीं करते। जैसे माता की अपने पुत्र पर दया और उसमें ममता होती है, वैसे ही वे सब पर दया करते हैं और निश्चय में उदासीन रहते हैं। किसी आसक्ति के कारण वे कोई कार्य नहीं करते वरन् दूसरों की इच्छापूर्ति में सहयोग कर देते हैं। उनकी अपनी कोई इच्छा नहीं होती किन्तु उनके द्वारा दूसरों के मनोरथ पूरे होते हैं।

जैसे, आकाश किसीका स्पर्श नहीं करता, किसीसे नहीं बँधता वैसे ही ब्रह्मज्ञानी महापुरुष किसीमें लिप्त नहीं होते।''

'श्रीयोगवाशिष्ठ' में आता है : ज्ञानी देह के नाश को अपना नाश नहीं मानते और देह के उपजने में

अपना उपजना नहीं मानते। जैसे, घट के उपजने से आकाश नहीं उपजता और घट के अभाव से आकाश का अभाव नहीं होता, ऐसे ही देह के उपजने से आत्मा नहीं उपजती और देह के नष्ट होने से आत्मा नष्ट नहीं होती।

जिनको अपने आत्मा-परमात्मा का ज्ञान हो गया है उनके लिए कुछ हुआ तो क्या और न हुआ तो भी क्या ? वे ज्यों-के-त्यों रहते हैं।

अवर्णनीय है ब्रह्मज्ञानी की महिमा। छप्पन प्रकार के भोग उनके सामने रख दो, उसे खाते हुए उन्हें हर्ष नहीं होता और भीख माँगकर, दर-दर भटककर रूखा-सूखा खाने को मिले तब भी उन्हें शोक नहीं होता।

ब्रह्मज्ञानी जुगत भुगत का दाता।
ब्रह्मज्ञानी पूरन पुरुष विधाता॥

जिन्होंने अपने वास्तविक स्वरूप आत्मतत्त्व को जान लिया है, ऐसे ब्रह्मज्ञानी स्वयं कंगाल दिखते हुए भी माँगनेवाले को राज्य दे देने का सामर्थ्य रखते हैं।

वशिष्ठजी कहते हैं :

''हे रामजी ! ज्ञातज्ञेय पुरुष आकाशवत् व्याप्त होते हैं।''

जैसे, आकाश सब ओर है, ऐसे ही वह चैतन्य भी सब ओर है। शरीर में रहते हुए भी वह सब ओर फैला रहता है। वह चैतन्य अनंत ब्रह्माण्ड में आकाश की तरह व्याप्त है।

ब्रह्मज्ञानी में इतना सामर्थ्य होता है कि वे अपने मृतक भक्त की, शिष्य की आत्मा को अपने संकल्पमात्र से इच्छित लोक की प्राप्ति करा सकते हैं। वे चाहें तो स्वयं भी उस चैतन्य की सत्ता से तीनों कालों और तीनों लोकों की यात्रा कर सकते हैं लेकिन ज्ञानी किसी भी अप्राप्त कार्य के लिए यत्न नहीं करते।

मत करो वर्णन हर बेअंत है।
क्या जाने वो कैसो है !

उन ज्ञानी की स्थिति का वर्णन करने का सामर्थ्य किसीमें भी नहीं है। ज्ञानी में ही ज्ञानी को पहचानने की क्षमता है। आम लोगों को ब्रह्मज्ञानी का पूर्ण अनुभव समझ में नहीं आता लेकिन साधन-भजन से ब्रह्मज्ञानी की स्थिति की झलक उन्हें जरूर मिल जाती है। ब्रह्मज्ञानी सबके समक्ष स्वयं को प्रकट नहीं करते। जो विशेष अधिकारी होते हैं, उन्हीं के समक्ष वे आत्मज्ञान की गंगा बहाते हैं।

जिन पाया तिन छुपाया।

जैसे, कछुआ अपने अंग छुपा लेता है, कभी-कभी ही बाहर निकालता है, ऐसे ही ज्ञानवान् पुरुष जब कभी किसी सत्शिष्य, पवित्र आत्मा, आत्मज्ञान के जिज्ञासु को देखते हैं तभी अपने अनुभवरूपी अंगों को बाहर लाते हैं। छोटी बुद्धि के लोगों के सामने ज्ञानी पुरुष कछुए की तरह अपने अनुभवरूपी अंगों को समेट लेते हैं।

जैसे, बुद्धिमान् दुकानदार किसी खास ग्राहक के आगे ही अपने सामान के विशेष नमूने प्रस्तुत करता है। जौहरी विशेष ग्राहक के आगे ही हीरे की सब किस्में प्रस्तुत करता है। ...तो ज्ञानवान् जो जौहरियों के भी जौहरी हैं, वे आत्मज्ञानरूपी हीरे को किसी ऐरे-गैरे के सामने कैसे प्रकट कर दें ?

जो सात्त्विक भक्त हैं, पुण्यात्मा हैं, संतों की कृपा पचाने की शक्ति जिनमें है, जो अपने अनमोल जन्म की कीमत जानते हैं, जिन्होंने अपनी बुद्धि को उन्नत किया है, विकसित किया है, सूक्ष्म किया है, ऐसे अधिकारी पुरुषों के सामने ही ज्ञानी अपने अनुभव को प्रकट करते हैं ताकि वे शीघ्रातिशीघ्र अपने शुद्ध स्वभाव को जानकर, सारे दुःखों से मुक्ति पा लें, सारे कर्मबंधनों से छूट जायें, सम्पूर्ण पाप-तापों से, सारी अविद्या से मुक्त होकर नित्य विद्यमान परमेश्वर को पा लें।

परमात्मा पहले भी था, अभी भी है और बाद में भी रहेगा। शरीर नश्वर है। उस नश्वर का आकर्षण मिट जाय, जो सदा रहता है उस परमात्मा में प्रीति हो जाये और अमर आत्मा के प्रति आकर्षण बढ़ जाये तो इसी में जीव का परम मंगल है।

जीवमात्र का मंगल चाहनेवाले, मानवजाति के लिए वरदानस्वरूप ऐसे महापुरुष संसार में बड़े पुण्यों

से प्राप्त होते हैं।

असली जीवन तो उन्हीं का है। आत्म-साक्षात्कार करने के बाद ही जीने तथा मरने का असली आनंद आता है। मरनेवाले शरीर को जीवन मानकर घसीट-घसीटकर जियो लेकिन कितने दिन ? असली जीवन तो गुरुतत्त्व की अनुभूति के बाद ही शुरू होता है। अरे ! तत्त्ववेत्ता सद्गुरु की मुलाकात से ही खुशी में चार चाँद लग जाते हैं। अगर तत्त्व का साक्षात्कार हो जाये तो कहना ही क्या !

जिनको आत्मसुख मिला है उनके दो-पाँच दिन के सान्निध्य से लाखों-लाखों लोगों का हृदयकमल खिल जाता है तो उनका हृदय कैसा खिला होगा ! 'इतने में उतना तो उतने में कितना ?'

पहले के महापुरुष जहाँ-जहाँ गये, वे जगहें अभी भी पूजी जा रही हैं। जिन पत्थरों पर वे बैठे वे पत्थर भी पूजे जा रहे हैं। उनके लगाये गये बरगद-पीपल भी लोगों की मनोकामनाएँ पूरी करते हैं तो उनकी स्वयं की अनुभूति कैसी होती होगी !

विवेकानंद ने कहा है :

''ऐसे आत्मारामी पुरुष का धरती पर होना मानवता के लिए वरदानस्वरूप है। वे चाहे बोलें चाहे न बोलें, प्रसिद्ध हों या अप्रसिद्ध हों फिर भी धरती पर उनका रहना मनुष्यमात्र के लिए परम सुखदायी है।

दुनिया के समस्त धर्मग्रंथ रसातल में चले जायें लेकिन जब तक एक भी ब्रह्मज्ञानी संत और उनका एक सत्शिष्य धरती पर हो तो धर्म फिर से उभरेगा।''

हमारी ही भाषा में और हमको अनुकूल हो, ऐसे शब्दों को चुनकर ज्ञानी हमारे सामने लाते हैं। हमारे हित की सार बातें हमको सहज में ही इस प्रकार सुनाते हैं कि हम सब मुसीबतों, सब कष्टों एवं सब दुःखों से आसानी से बच निकलें।

क्या कहना ऐसे सबके संदेहों का नाश करनेवाले ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों का और क्या कहना उनके चरणों की धूलि को मस्तक पर लगाकर अपना भाग्य बना लेनेवाले सत्शिष्यों का !

एक तितिक्षु ब्राह्मण का इतिहास

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

'श्रीमद्भागवत' के ११वें स्कंध के २३वें अध्याय में यह प्रसंग आता है :

भगवान श्रीकृष्ण उद्धव से कहते हैं :

प्राचीन समय में उज्जैन में एक ब्राह्मण रहता था। उसने कृषि, व्यापार आदि करके बहुत-सी धन-संपत्ति इकट्ठी कर ली थी। वह धन का इतना लोभी था कि धन खर्चे ही नहीं, किसी भी रीति-नीति से धन बढ़ाता जाये।

उसकी कंजूसी और धन में उसकी अधिक आसक्ति के कारण कुटुम्बी उससे परेशान रहने लगे। आखिर एक दिन ऐसा आया कि जिस धन को उसने बड़े उद्योग और परिश्रम से इकट्ठा किया था वह धन उसकी आँखों के सामने ही नष्ट हो गया।

उस ब्राह्मण का कुछ धन तो उसके कुटुम्बियों ने ही छीन लिया, कुछ चोर चुरा ले गये, कुछ धन आग आदि दैवी प्रकोपों से नष्ट हो गया, कुछ समय के फेर से खत्म हो गया, कुछ साधारण मनुष्यों ने ले लिया और बचा-खुचा धन कर और दण्ड के रूप में शासकों ने हड़प लिया।

इस प्रकार उसकी सारी संपत्ति चली गई। धन से उसने न तो धर्म कमाया और न ही भोग भोगे। इधर उसके सगे-संबंधियों ने भी उससे मुँह मोड़ लिया। अब उसे बड़ी भयानक चिंता ने घेर लिया। चिंता करते-करते ही उसके मन में संसार के प्रति

महान् दुःखबुद्धि और उत्कट वैराग्य का उदय हो गया । वह मन-ही-मन कहने लगा कि : 'मैं व्यर्थ ही 'हाय धन... हाय धन...' कर रहा हूँ । जिस धन के लिये मैंने इतना परिश्रम किया, अंत में तो उसे छोड़कर मरना ही है । जिसे मृत्यु के समय छोड़ना पड़े, वह अभी से छूट गया तो इसमें मेरा क्या गया ? शरीर भी चला जायेगा लेकिन मैं तो रहूँगा और मेरा परमात्मा भी रहेगा । अब जो समय बचा है उसमें मैं तप करूँगा ।'

भगवान कहते हैं : प्यारे उद्धव ! अपनी वृत्तियाँ जो लोभ में लगी हैं, कामना में लगी हैं, द्वेष में लगी हैं, उन्हीं वृत्तियों को एक-दूसरे में परमात्मा को निहारने में भी लगा सकते हैं । सारी वृत्तियाँ मुझमें तन्मय कर दो और इस प्रकार अपनी सारी शक्ति लगाकर मन को वश में कर लो । फिर मुझमें ही नित्ययुक्त होकर स्थित हो जाओ । बस, मनुष्य जीवन का फल यही है, सारे योगों का साधन इतना ही है, सारे दुःखों का अंत इतने से ही हो जायेगा, सारी ऊँचाइयों का अनुभव इतना करने से हो जायेगा ।

उद्धव ! वह उज्जैनवासी ब्राह्मण मौनी संन्यासी हो गया । अब उसके चित्त में किसी भी स्थान, वस्तु या व्यक्ति के प्रति आसक्ति न रही । उसे संन्यासी वेश में देखकर भी लोग उसकी निंदा करने लगे कि : 'धन चला गया, दरिद्र हो गया, कुटुम्बियों ने मुँह मोड़ लिया इसलिये उसने संन्यास ले लिया... भीख माँगने का अच्छा धंधा बना लिया... मुंड मुँड़ाकर लड्डू खाने का रास्ता ढूँढ़ लिया...' लेकिन उस ब्राह्मण ने लोगों की निंदा से भी संन्यास ले लिया । वह सदैव मेरे चैतन्यस्वरूप का स्मरण करने लगा । वह महाकाल के दर्शन करने जाता तो लोग बोलते कि : ' देखो देखो, अब इस कृपण ने ढोंग रचा है । कंगाल हो गया है तो महाकाल के द्वार पर भीख माँगने जाता है ।'

पहले तो उसके पास धन-संपत्ति होने के कारण लोग चुप थे लेकिन अब वे ही उससे बदला लेने लगे । कभी वह मधुकरी करने जाता तो लोग उसके सिर पर थूक देते, अपानवायु छोड़ते, उसे पालतू पशु-पक्षियों की तरह बाँधकर घर में बंद कर देते, किन्तु वह चुपचाप सब सह लेता । ब्राह्मण ने मन को ऐसा साधा कि जो मन धन में लगा था वही मन परमात्मा में लगकर परमात्ममय हो गया । लोगों के अपशब्द एवं विरोध भी ब्राह्मण को विचलित न कर पाये ।

ब्राह्मण अपने मन को समझाता कि : 'वे बदले की भावना से बोलते हैं तो बोलने दो । बदला ले लेने दो । मरने के बाद बदला चुकाना पड़े इससे तो भगवान जीते-जी चुकवा रहे हैं । वाह प्रभु ! वाह...'

कभी-कभी उसका मन दुःखी हो जाता तो वह अपने मन को समझाता कि : 'अरे मन ! दुःख किस बात का करता है ? कर्म का फल है तो हँसते-हँसते भोग ले अथवा तो यह सोच कि प्रकृति का विधान है तो मैं क्यों दुःखी होऊँ ? विधान तो समर्थ होता है, उसे गुजरने दे...अगर यह तरतीव्र प्रारब्धवेग से हो रहा है तो पूरा होने दे, इससे तू दुःखी क्यों होता है ? ...और यदि ईश्वर की मर्जी है, ईश्वर तुझे कुंदन बनाना चाहते हैं, पवित्र बनाना चाहते हैं, शुद्ध बनाना चाहते हैं, निंदा करवाकर तेरे पाप और दोष मिटाना चाहते हैं तो ईश्वर को धन्यवाद दे ...इसमें दुःखी क्यों होता है ?'

इस प्रकार वह अपने मन को येन-केन-प्रकारेण समझा लेता ।

प्रिय उद्धव ! हर मनुष्य में योग्यता है शमवान् होने की, हर मनुष्य में सामर्थ्य है मुझ चैतन्य से एक होने की । उद्धव ! मनुष्य-जन्म का फल यही है कि वह अपनी आवश्यकताएँ न बढ़ाये, आडम्बर न बढ़ाये, वासना न बढ़ाये, वरन् अपनी इच्छा-वासना को नियंत्रित करे , शास्त्र एवं गुरु की मर्यादा के अनुसार आचरण करे एवं मुझ परमेश्वर के साथ एकाकार हो जाये ।

हे उद्धव ! उज्जैन नगरी का वह ब्राह्मण अब उज्जैन नगरी का नहीं, ईश्वर नगरी का हो गया । दुर्जन कभी उसकी निंदा करते तो कभी सज्जन उसकी प्रशंसा करते लेकिन वह अपने मन को समझाता कि :'दुर्जनों का स्वभाव है निंदा करना और सज्जनों का स्वभाव है सराहना करना । मन ! तू इन दोनों को देखनेवाला बन । तू अपना स्वभाव देख । जैसे भगवान श्रीकृष्ण शमवान् हैं, भगवान शिव शमवान् हैं ऐसे हर जीव शमवान् और प्रसन्नात्मा हो

सकता है। हे मन ! तू धन में लगा , उसके पहले तू काम-विकार में लगा, उसके पहले तू खिलौनों में लगा... सब खिलौने चले गये, काम-विकार के दिन चले गये और धन भी चला गया परन्तु जो कभी नहीं जाता, हे मेरे मन ! तू उस परमात्मा में लग।'

इस प्रकार वह ब्राह्मण बार-बार अपने मन को निःसंकल्प करता। कभी मन बंदर की तरह भाग जाता तो वह मन से कहता : 'हे मन ! भाग, तू कहाँ भागता है ?' ...और जोर से मेरा नामोच्चारण करता। मन तो वहीं होता है जहाँ उच्चारण होता है। हे उद्धव ! जोर से नामोच्चारण करने से मन पुनः लौट आता है। फिर शांत भाव से उच्चारण करता है।

वास्तव में देखा जाये तो मन कहीं जाता नहीं है, यहीं बैठकर कल्पना करता है। कोई चीज मन के भीतर आती नहीं और मन कहीं जाता नहीं, सारी ताना-बुनी कल्पनाओं की है। कल्पनाओं को काटने के लिये मेरे नाम का आश्रय लेना चाहिए।

इस प्रकार उज्जैन का वह भूतपूर्व कृपण, कामी एवं लोभी ब्राह्मण सत्संगरूपी नौका में बैठा और उसने विवेक-वैराग्य का आश्रय लिया। विवेक-वैराग्यरूपी पतवार की सहायता से वह ब्राह्मण भवसागर से पार हो गया।

यद्यपि दुष्टों ने उस ब्राह्मण को बहुत सताया, फिर भी वह अपने धर्म में अडिग रहा एवं भवबंधन की परंपरा में डालनेवाले अपने चित्त को निर्भय नारायण के ज्ञान में लगाकर मुक्त हो गया।

हे उद्धव ! इस संसार में मनुष्य को कोई दूसरा सुख या दुःख नहीं देता, यह तो उसके चित्त का भ्रममात्र है। यह सारा संसार और इसके भीतर मित्र,उदासीन और शत्रु के भेद अज्ञानकल्पित हैं।

तस्मात् सर्वात्मना तात निगृहाण मनो धिया।
मय्यावेशितया युक्त एतावान् योगसंग्रहः॥

'इसलिये प्यारे उद्धव ! अपनी वृत्तियों को मुझमें तन्मय कर दो और इस प्रकार अपनी सारी शक्ति लगाकर मन को वश में कर लो। फिर मुझमें ही नित्ययुक्त होकर स्थित हो जाओ। बस, सारे योगसाधन का इतना ही सार-संग्रह है।'

(श्रीमद्भागवत : ११.२३.६१)

'गुरुकृपा हि केवलम्...'

[समर्थ श्री रामदास का 'दासबोध']

[गतांक का शेष...]

* जिनके मन में अनेक विषय-वासनाएँ भरी रहती हैं, उन्हें परमार्थ की चर्चा तो केवल कौतूहल और विनोद का विषय ही प्रतीत होती है। जैसे शूकरों को गंधादि का लेपन किया जाये या भैंसों के शरीर पर चंदन पोता जाये अथवा कचरा-घर (घूर) में लोटनेवाले गधों पर सुगंधी द्रव्यों का छिड़काव किया जाये तो वह निरर्थक है, वैसे ही विषयासक्त व्यक्तियों के लिये ब्रह्मज्ञान का बोध निरुपयोगी होता है।

* विषयों का सदा चिंतन करनेवाले विषय-लोलुपों को परमार्थ, सत्संग, ईश्वर आदि की बातें नहीं सुहातीं। जैसे कुत्ते को खीर नहीं हजम होती वैसे ही विषयासक्त पुरुष को तत्त्वज्ञान का लाभ नहीं मिल सकता।

* जैसे कोई कुटिल कौआ हंसों की पंक्ति में बैठकर अपने को हंस मानने लगता है वैसे ही विषयी पुरुष सज्जनों के सत्संग में बैठकर सज्जन होने का स्वाँग रचता है, पर उसकी वासना विषयरूपी मल में ही लगी रहती है।

* जिस प्रकार पत्नी को साथ में रखते हुए कोई व्यक्ति संन्यासी बनने की बात करता हो, वैसे ही चित्त में विषयों की इच्छा करते हुए जो ब्रह्मज्ञान की बातें बघारता है उसे क्या लाभ है ? मल-मूत्र में

रहनेवाले ये कीड़े... नरक भोगनेवाले ये पठित मूर्ख... इन्हें अद्वैत आनंद की क्या कल्पना ? विषयों का दास कभी परमात्मा का भक्त नहीं हो सकता।

❋ शाब्दिक वेदान्त और अध्यात्म की व्यर्थ बड़-बड़ करनेवाले व्यक्ति को सच्चे ज्ञान की प्राप्ति कदापि नहीं हो सकती।

❋ गुरु का उपदेश लेने पर शिष्य यदि ऐसा विषय-लंपट, कुमार्गगामी, दुष्ट और पापी हो गया तो उसके पाप वज्रलेप(अमिट) हो जाते हैं परंतु पूर्ण पश्चात्ताप करके यदि वह पुनः सद्गुरु की शरण जाता है, तो गुरुकृपा से उसका उद्धार हो सकता है।

❋ जो सद्गुरु से, स्वामी से द्रोह करता है, वह जब तक सूर्य-चंद्र हैं, तब तक नरक का भागी होता है।

❋ जिसे केवल क्षणिक वैराग्य हो जाता है, ऐसा व्यक्ति सद्गुरु की शरण में जाने पर भी ज्ञान का पात्र नहीं बन सकता क्योंकि ज्ञान उसके पास टिक नहीं सकता।

❋ जिसके मन में काम, क्रोध, कपट तथा घृणा आदि विकार भरे रहते हैं। उसके चित्त में अपने शरीर के प्रति अति आसक्ति, अनाचार, विषय-लोलुपता और सांसारिक प्रपंचों की दिन-रात चिंता लगी रहती है। वह दीर्घसूत्री, कृतघ्न, कुकर्मी, कुतर्की, क्रोधी, निष्ठुर, आलसी, अविवेकी, अधीर और अविश्वासी होता है। उसके हृदय में आशा, ममता, तृष्णा, कल्पना, कुबुद्धि, दुर्वासना, मूर्खता आदि दुर्गुणों का डेरा रहता है।

❋ वह सदा औरों की निंदा और तिरस्कार करता है।

❋ उसमें तितिक्षा नहीं होती।

❋ उसमें भक्ति, विरक्ति और शांति नहीं होती और न सद्भाव, नम्रता, दया, तृप्ति आदि सद्गुणों का लवलेश उसमें होता है।

❋ वह शारीरिक श्रम से जी चुराता है।

❋ दान-धर्म में वह बड़ा कंजूस होता है।

❋ वह सदा दूसरों के दोष ही देखा करता है, झूठ बोलता है और छल-कपट से औरों को फँसाता है।

❋ उसके आचार-विचार में साम्य नहीं होता।

❋ ऐसा व्यक्ति कभी दूसरों के दुःख को नहीं समझता बल्कि दूसरों के दुःख में सुख का अनुभव करता है।

❋ ऐसे लोग भला ईश्वर को कैसे प्रसन्न कर सकते हैं ? उनकी आँखें तब ही खुलेंगी, जब वे बुढ़ापे में अशक्त और असहाय होकर सगे-संबंधियों द्वारा उपेक्षित और अपमानित होंगे।

जिन लोगों में उपरोक्त दोष-दुर्गुण नहीं होते, वे ही सत्‌शिष्य कहलाते हैं।

माता-पिता-गुरु की सेवा का महत्त्व

[गतांक का शेष...]

'शिवपुराण' में आता है :

पित्रोश्च पूजनं कृत्वा प्रक्रान्तिं च करोति यः ।
तस्य वै पृथिवीजन्यफलं भवति निश्चितम् ॥
अपहाय गृहे यो वै पितरौ तीर्थमाव्रजेत् ।
तस्य पापं तथा प्रोक्तं हनने च तयोर्यथा ॥
पुत्रस्य च महत्तीर्थं पित्रोश्चरणपंकजम् ।
अन्यतीर्थं तु दूरे वै गत्वा सम्प्राप्यते पुनः ॥
इदं संनिहितं तीर्थं सुलभं धर्मसाधनम् ।
पुत्रस्य च स्त्रियाश्चैव तीर्थं गेहे सुशोभनम् ॥

'जो पुत्र माता-पिता की पूजा करके उनकी प्रदक्षिणा करता है, उसे पृथ्वी-परिक्रमाजनित फल सुलभ हो जाता है । जो माता-पिता को घर पर छोड़कर तीर्थयात्रा के लिये जाता है, वह माता-पिता की हत्या से मिलनेवाले पाप का भागी होता है, क्योंकि पुत्र के लिये माता-पिता के चरण-सरोज ही महान् तीर्थ हैं । अन्य तीर्थ तो दूर जाने पर प्राप्त होते हैं, परंतु धर्म का साधनभूत यह तीर्थ तो पास में ही सुलभ है । पुत्र के लिये (माता-पिता) और स्त्री के लिए (पति) सुंदर तीर्थ घर में ही विद्यमान हैं ।'

(शि.पु. रुद्र., सं., कु. खं. : १९.३९-४२)

पुण्डलीक ! मैंने यह कथा सुनी और मैंने मेरे माता-पिता की आज्ञा का पालन किया । यदि मेरे माता-पिता में कभी कोई कमी दिखती थी तो मैं उस कमी को अपने जीवन में नहीं लाता था और अपनी श्रद्धा को भी कम नहीं होने देता था । मेरे माता-पिता प्रसन्न हुए । उनका आशीर्वाद मुझ पर बरसा । फिर मुझ पर मेरे गुरुदेव की कृपा बरसी इसीलिये ब्रह्मज्ञान में मेरी स्थिति हुई और योग में सफलता मिली । माता-पिता की सेवा के कारण मेरा हृदय भक्तिभाव से भरा है । मुझे किसी अन्य इष्टदेव की भक्ति करने की कोई मेहनत न करनी पड़ी । **मातृदेवो भव । पितृदेवो भव । आचार्यदेवो भव ।**

मंदिर में तो पत्थर की मूर्ति में भगवान की भावना की जाती है जबकि माता-पिता एवं गुरुदेव में तो सचमुच परमात्मदेव हैं, ऐसा मानकर मैंने उनकी प्रसन्नता प्राप्त की । फिर तो मुझे न वर्षों तक तप करना पड़ा न ही अन्य विधि-विधानों की कोई मेहनत करनी पड़ी । तुझे भी पता है कि यहाँ के रसोईघर में स्वयं गंगा-यमुना-सरस्वती आती हैं । तीर्थ भी ब्रह्मज्ञानी के द्वार पर पावन होने के लिये आते हैं । ऐसा ब्रह्मज्ञान माता-पिता एवं ब्रह्मज्ञानी गुरु की कृपा से मुझे मिला है ।

पुण्डलीक ! तेरे माता-पिता जीवित हैं और तू तीर्थों में भटक रहा है ?''

पुण्डलीक को अपनी गलती का एहसास हुआ । उसने कुक्कुर मुनि को प्रणाम किया एवं पंढरपुर जाकर माता-पिता की सेवा में लग गया ।

माता-पिता की सेवा को ही उसने प्रभु की सेवा मान लिया । माता-पिता के प्रति उसकी सेवा की निष्ठा देखकर भगवान नारायण बड़े प्रसन्न हुए एवं स्वयं उसके समक्ष प्रगट हुए । पुण्डलीक उस समय माता-पिता की सेवा में व्यस्त था ।

अभी भी पंढरपुर में पुण्डलीक की दी हुई ईंट पर भगवान विष्णु बिराजमान हैं और पुण्डलीक की मातृ-पितृभक्ति की खबर दे रहा है पंढरपुर का तीर्थ ।

मैंने तो यह भी देखा है कि जिन्होंने अपने माता-पिता एवं ब्रह्मज्ञानी गुरु को रिझा लिया है वे भगवान तुल्य पूजे जाते हैं । उनको रिझाने के लिये पूरी दुनिया लालायित रहती है । इतने महान् हो जाते हैं वे मातृ-

पितृभक्ति से एवं गुरुभक्ति से !

*

जो माता-पिता, स्वजन, पति आदि सत्संग या भगवान के रास्ते, ईश्वर के रास्ते जाने से रोकते हैं तो उनकी बात नहीं माननी चाहिए । जैसे, मीरा ने पति की बात ठुकरा दी और प्रह्लाद ने पिता की ।

गोस्वामीजी के वचन हैं कि :

जाके प्रिय न राम बैदेही, तजिए ताहि कोटि बैरी सम,
जद्यपि परम सनेही ।

'भागवत' में भी कहा है :

गुरुर्न स स्यात्स्वजनो न स स्यात्
पिता न स स्याज्जननी न सा स्यात् ।
देवं न तत्स्यान्न पतिश्च स स्या-
न्न मोचयेद्यः समुपेतमृत्युम् ॥

'जो अपने प्रिय सम्बन्धी को भगवद्भक्ति का उपदेश देकर मृत्यु की फाँसी से नहीं छुड़ाता, वह गुरु गुरु नहीं है, स्वजन स्वजन नहीं है, पिता पिता नहीं है, माता माता नहीं है, इष्टदेव इष्टदेव नहीं है और पति पति नहीं है ।' (श्रीमद्भागवत : ५.५.१८)

*

सत्कर्म में भी सावधानी !

कर्म तो जरूर करने चाहिए किन्तु प्रयत्नपूर्वक अच्छे कर्म ही करने चाहिए और अच्छे कर्म में भी भावों की शुद्धता जरूरी है । अच्छे कर्म भी अगर द्वेषपूर्ण बुद्धि से होते हैं तो उनका परिणाम अच्छा नहीं आता है । किसीको नीचा दिखाने के लिए अच्छा काम करते हो तो परिणाम बढ़िया नहीं आता है । जैसे, दक्ष ने शिवजी को नीचा दिखाने के लिए यज्ञरूपी अच्छा कर्म भी द्वेषबुद्धि से किया तो उसका परिणाम दुःखद ही आया । अतः सत्कर्म भी सावधान रहकर करने चाहिए ।

स्वामी सतरामदासजी महाराज

स्वामी सतरामदासजी महाराज साँईं कँवररामजी के गुरु और स्वामी खोतारामजी के प्रिय सुपात्र सुपुत्र थे जिनकी कृपा और आशीर्वाद से माता तीर्थबाई के यहाँ सुपुत्र साँईं कँवररामजी का अवतरण हुआ ।

साँईं खोतारामजी के तीन बेटे थे : सहजराम, श्री सभागचन्द और श्री सतरामदासजी । संवत १९२३ में गुरुवार के दिन प्रातःकाल चार बजे रुड़की (सिंध, पाकिस्तान) में स्वामी सतरामदासजी का जन्म हुआ । साँईं खोतारामजी रिद्धि-सिद्धि के मालिक, उच्च कोटि के ब्रह्मज्ञानी महापुरुष थे । वे अपनी दिव्य दृष्टि से जान गये थे कि उनके घर किसी दिव्यात्मा योगभ्रष्ट योगी का जन्म हुआ है । जन्म लेते ही बालक ने माता का दूध पीना बंद कर दिया । माता ने बहुत प्रयत्न किया बालक को दूध पिलाने के लिए लेकिन सब व्यर्थ गया । आखिर परेशान होकर यह खबर बालक के पिताश्री साँईं खोतारामजी को दी गई । समाचार पाकर साँईं खोतारामजी तुरंत घर आये और बालक को गोद में लेकर इस प्रकार समझाने लगे कि : "बेटा ! यह बात सही है कि पिछले जन्म की तुम्हारी खाने की वासना ने तुम्हें योग से भ्रष्ट कर दिया था और इसलिए तुम्हारा योग अधूरा रह गया और तुम्हें फिर से मनुष्य योनि में आना पड़ा है । लेकिन अब ईश्वर की कृपा से तुम्हारा जन्म ऐसे कुल में हुआ है जहाँ तुम निर्विघ्न भक्ति कर सकोगे और

पिछले जन्म का अधूरा योग निर्विघ्न सम्पन्न होगा। अतः बिना किसी संकोच के माता का दूध अंगीकार करो।'' तीन दिन के योगी बेटे ने अपने ब्रह्मज्ञानी पिता की आज्ञा मानकर दूध लेना शुरू किया, जिसको देखकर माँ और परिवार के दूसरे सदस्य खुश हुए।

साँईं सतरामदासजी अब बड़े हो गये। बच्चों के साथ खेलने लगे। खेल-खेल में भी अपने साथियों को लेकर सत्संग करने बैठ जाते अथवा कहीं से सत्संग की आवाज या कीर्तन की आवाज सुनाई पड़ती तो खेल छोड़कर जाकर सत्संग-कीर्तन में बैठ जाते। इनकी आवाज भी मधुर और आकर्षक थी... सबका दिल छू लेती थी। सबके साथ वे प्रेम और नम्रता से पेश आते। कोई भी वस्तु या प्रसाद उन्हें खाने को मिलता तो वे हमेशा बाँटकर खाते। कभी कोई चीज किसी से छुपाकर नहीं खाते। बचपन से ही बाँटकर खाने को वे बंदगी मानते थे।

डेखारे खाइण आहे शर्मिन्दगी।
लिकाए खाइण आहे गंदगी।
विरहाए खाइण आहे बंदगी।

'दिखाकर खाना है शर्मिन्दगी, छुपाकर खाना है गंदगी और बाँटकर खाना है बंदगी।'

कभी कपड़े में बताशे बाँधकर एक-दो सेवाधारी को साथ ले जंगल की ओर चले जाते और वहाँ चींटियों के घरों में बताशे तोड़कर चूरा करके डाल आते। उनके दिल में प्राणिमात्र के लिए प्रेम भरा था। पशु-पक्षियों तक की वे सँभाल रखते। रास्ते जाते किसी चोट खाये हुए पशु को या किसीके शरीर पर घाव देखते तो उनके घावों को साफ करके मलहम-पट्टी करते। इतना मोम दिल था उनका! वे हमेशा कहते थे कि ईश्वर को प्रेम के द्वारा ही जाना जा सकता है।

जिन प्रेम कियो तिन्हीं प्रभू पायो।
बिन प्रेम कुछ हाथ न आयो॥
(गुरुवाणी)

अंग्रेज कवि कॉलरिज ने कहा है :

He prayeth well, who loveth well
Both man and bird and beast.

जो इन्सान मनुष्य और पशु-पक्षियों से प्रेम करता है वही ईश्वर की सच्ची प्रार्थना कर सकता है। प्रार्थना का दूसरा नाम है प्यार।

❋ परोपकारिता ❋

साँईं सतरामदासजी के जीवन का मुख्य सिद्धांत था परोपकार, दूसरों का हित, दूसरों की भलाई। दूसरों की भलाई की खातिर अपना सुख-चैन, आराम तक न्यौछावर कर देते। दूसरों के दुःख को अपना दुःख समझते और उसे मिटाने के लिए प्रयत्नशील रहते।

एक बार ओबाड़े ताल्लुका के रेती गाँव में इनके पिताश्री एवं गुरु श्री साँईं खोतारामजी ने सत्संग हेतु कोई तारीख दी थी। वह तारीख आने से पहले उनका शरीर छूट गया। अभी बारहवाँ भी नहीं हुआ था कि वह सत्संग की तारीख आ गई। एक ओर घर में शोक है और दूसरी ओर पिता के दिये हुए वचन का पालन करना है। कर्त्तव्य और भावना की जंग में कर्त्तव्य ने विजय प्राप्त की और उन्होंने बारहवाँ होने से पहले अपने पिताश्री के दिये हुए वचन का पालन किया। इसी तरह वे हमेशा अपने कर्त्तव्य-पालन में अडिग रहते।

एक बार मीरपुर माथेली ताल्लुका के दादलगारे गाँव के दो सज्जन भाई नन्दूमल और भाई मोहनमल सतरामदासजी के पास आकर विनती की कि :

''साँईं! हमें ताल्लुका पंचायत ने अपनी जमात (नियात) से अलग कर दिया है। अब हम आपकी शरण में आये हैं। दया करके शरणागत की लाज रखिए।''

साँईं सतरामदासजी तो अंतर्यामी थे। वे जान गये थे कि भूल इन्हीं की है। इनकी भूल के कारण ही इनको नात में से निकाला गया है। अतः इनको डाँटते हुए कहा : ''तुम लोग बुरे कर्म करके फिर आते हो संतों के पास माफी माँगने। जहाँ पर भूल की है वहीं जाओ। उन्हीं से माफी माँगो। हमारे पास आने की क्या जरूरत है?''

संतश्री की नाराजगी देख दोनों सज्जन दुःखी हो गये। सिर झुकाकर बैठ गये और मन-ही-मन प्रार्थना करने लगे :

तोड़े तड़ीं तूं, तो दर तोय न छड़ियां ।
(शाह)

'चाहे कितना भी धिक्कारो तुम, फिर भी दामन न छोड़ूँगा तुम्हारा ।'

भाई नन्दूमल और भाई मोहनमल ने भी क्या किया कि दोनों गये साँईं सतरामदासजी के बड़े भाइयों के पास । उन्हें मनाने लगे कि आप हमारे लिए अपने भाई को मनाएँ । इनकी स्थिति सुनकर बड़े भाइयों को इन पर दया आ गई और इनकी ओर से अपने छोटे संत भाई को समझाने लगे कि : ''ये बेचारे आपकी शरण आये हैं । शरण आये हुए की लाज तो भगवान भी रखते हैं और ये बेचारे तो आपसे माफी माँग रहे हैं । इन्सान खता का घर है । इन्होंने पंचायत से भी माफी माँगी है लेकिन पंचायत इन्हें माफ करने के लिए राजी नहीं है । आपके सिवाय भला कौन इनकी मदद करेगा ? शरणागत की लाज रखिए ।''

सतरामदासजी अपने बड़े भाइयों की आज्ञा न टाल सके । दो सेवाधारियों को साथ में लेकर मीरपुर माथेली आये और ताल्लुका पंचायत में पहुँचे। कुशलक्षेम पूछने के पश्चात् सतरामदासजी ने पंचों से अपील की कि : ''ये दो सज्जन भाई हमारे पास भगवान का नाम लेकर आये हैं । उसी भगवान का नाम लेकर हम आपके पास आये हैं । पंचों में परमेश्वर होता है । आपको हमारी विनती है, प्रार्थना है कि इन दोनों को अपना समझकर माफ कर दें । इन्हें अपनी नात में ले लें । ये अपने किये हुए पर पछता रहे हैं । इन्हें अपनी भूल का एहसास हो रहा है । अतः ये क्षमा के पात्र हैं । अच्छों से तो हरएक अच्छाई का व्यवहार करता है, धन्य तो वह है जो भूले-भटके को सही मार्ग पर लाये ।'' इतना कहकर सतरामदासजी चुप हो गये । सारी सभा में थोड़ी देर तक तो खामोशी छाई रही । चन्द मिनटों के बाद उस पंचायत का मुखिया श्री वापारीमल खामोशी को तोड़ते हुए जोशीले स्वर में गर्जते हुए बोला : ''इस बात का निर्णय तो कोई 'संग़' लेकर ही किया जायेगा । फिर चाहे इसकी सिफारिश भगत सतरामदासजी ही क्यों न करें ।''

यह सुनकर सतरामदाजी ने कहा : ''अच्छा... ठीक है । अब दूसरी बार इस बात के निर्णय के लिए जब कोई भी आयेगा वह 'संग़' लेकर ही आयेगा ।''

'संग़' का मतलब दो पार्टियों को मिलाने के लिए सेतु के रूप में कोई वस्तु या संबंध का निमित्त बनाया जाता है । जैसे कि एक राजा अपने से बलशाली राज्य को अपने साथ जोड़ने के लिए अपनी बेटी वहाँ के राजा या राजकुमार को ब्याह देता है । बेटी उसमें सेतु बनती है । उसे सिंधी भाषा में 'संग़' कहते हैं ।

यह कहकर सतरामदासजी अपने घर रुड़की चले आये ।

इधर ताल्लुका पंचायत के कितने ही सदस्य समझ गये कि सतरामदासजी नाराज होकर चले गये हैं । अब पता नहीं क्या होगा । संतों से गुस्ताखी करना, उनकी आज्ञा का उल्लंघन करना, उनको नाराज करना यह हम संसारियों के लिए अच्छा नहीं है । इस तरह से पंचों को अनेक प्रकार के विचार आने लगे और वे सतरामदासजी को किसी भी तरह नाराज करना नहीं चाहते थे । अतः उनकी माफी माँगकर, उन्हें मनाकर पंचायत में लाने के लिए पंचों ने अपने कुछ सदस्य भेजे । उन्होंने सतरामदासजी से क्षमायाचना की और पंचायत में चलने के लिये विनती की । पंचों को दिल से माफी माँगते हुए देख सतरामदासजी का दिल पिघल गया ।

संतों का हृदय मोम की तरह होता है । वे किसी को दुःखी नहीं देख सकते । सतरामदासजी भी भला कैसे पंचों को दुःखी देख सकते थे ? उन्होंने पंचों को समझाया कि : ''हमने पंचायत को वचन दिया है कि अबकी बार जो भी इस बात के निर्णय के लिए आयेगा वह 'संग़' लेकर ही आयेगा । इसलिए हम इस वक्त आपके साथ चल नहीं सकते ।''

सतरामदासजी का यह उत्तर सुनकर पंचायत के लोग निराश हो गये । उन्होंने एक बार फिर से उन्हें मनाने की कोशिश की : ''साँईं ! जब तक हमारे साथ नहीं चलेंगे तब तक हम यहाँ से जायेंगे नहीं ।''

एक ओर पंचायत के लोग ले जाना चाहते हैं और दूसरी ओर भाई नन्दूमल और भाई मोहनमल की विनीत आँखें मूक प्रार्थना कर रही हैं ।

सतरामदासजी अपनी सात साल की बच्ची को लेकर मीरपुर माथेली की ताल्लुक़ा पंचायत में पधारे। सतरामदासजी को पंचायत में फिर से आये हुए देख पंचायत के सदस्य बहुत प्रसन्न हुए।

सतरामदासजी ने फरमाया : ''हम पंचायत के निर्णय को लक्ष्य में रखते हुए अपनी बच्ची को 'संग़' के निमित्त में लाया हूँ। अब पंचायत को जैसा उचित लगे...''

यह सुनकर पंचायत के सारे सदस्य विचार में पड़ गये कि : 'अब इस बात का फैसला कैसे किया जाय ? सतरामदासजी तो अपने वचन पर अडिग हैं और संतों को नाराज भी नहीं करना है। अब क्या किया जाय ?' इस सोच-विचार में ही थे कि मुखिया अपनी आदत अनुसार उठकर कठोर स्वर में अभिमान से बोलने लगा : ''सतरामदासजी ! हमने आपको अपना 'संग़' लाने को नहीं कहा था जो इस तरह अपनी बेटी लाकर हमको धमकाने की कोशिश कर रहे हैं।''

सतरामदासजी मुखिया का यह उत्तर सुनकर स्तब्ध हो गये। उनके मुखारविंद से निकल गया कि : ''मुखिया ! तुम कोई मृघल (मिर्गी का मरीज) हो। तुम्हारे पास एक जबान नहीं है। एक घड़ी में एक जबान, दूसरी घड़ी में दूसरी जबान।'' बस, संत के मुख से ये शब्द निकलते ही मुखिया धरती पर पड़ा और बेहोश हो गया। मुँह से लार टपकने लगी। वह मछली की तरह धरती पर तड़फड़ाने लगा।

संतों के वचन दिखने और सुनने में अति छोटे होते हैं लेकिन होते बड़े असरदार हैं।

संतवचन और बटक बीज, ज्यों द्वितीया को चाँद।
देखन को नेको भया, बढ़त-बढ़त करत रंग॥

जिस तरह बटक या वटवृक्ष के बीज और द्वितीया का चाँद दिखने में छोटे होते हैं लेकिन वे तेजी से बढ़ते जाते हैं, इसी तरह संतों के वचन सुनने और दिखने में बहुत छोटे होते हैं परन्तु उनका असर जबरदस्त होता है।

मुखिया वापारीमल की स्थिति भी बहुत भयानक थी। वह धरती पर बेहोश पड़ा हुआ तड़प रहा है।

संत का दोखी ऐसे बिललाए,
ज्यों जल बिनु मछली तड़फड़ाए।
(गुरुवाणी)

वहाँ बैठे हुए दूसरे लोग उसकी ऐसी स्थिति देखकर काँपने लगे कि अब न जाने क्या होगा ! हाथ जोड़कर क्षमायाचना करने लगे और वापारीमल के लिए दया की भीख माँगने लगे।

सरोवर तरुवर संतजन, चौथा बरसे मेह।
परमारथ के कारणे, चारों धरिया देह॥

संतों का हृदय तो निर्मल क्षीरसागर की तरह होता है। अतः सतरामदासजी को भी वापारीमल पर दया आ गई। उन्होंने पंचों को कहा कि : ''इन्हें जूता सुँघाओ।'' जूता सुँघाने के बाद मुखिया होश में आया और फिर उसे घर ले जाया गया।

इधर पंचायत ने फैसला कर भाई नन्दूमल और भाई मोहनमल से मामूली दंड लेकर नात में ले लिये। वह दंड पंचायत ने सतरामदासजी के आगे रखा। उन्होंने वह दंड नन्दूमल और मोहनमल को वापस दे दिया। इस तरह दोनों सज्जनों को नात में लाने के लिए सतरामदासजी ने इतना कष्ट उठाया।

इधर मुखिया वापारीमल ने इस रोग से छुटकारा पाने के लिए बहुत दवाएँ की। पीर-फकीर, संत-दरवेशों के द्वार खटखटाये, बहुत नाक रगड़ा परन्तु कहीं से कोई फायदा नहीं हुआ।

खानपुर शहर में पीर फतेहशाह नामक एक औलिया फकीर रहते थे। उनकी दरगाह में भी मुखिया ने माथा टेका। आठ दिन रहकर दरगाह की सेवा की। रोग से छुटकारा दिलवाने के लिए वह फकीर साहेब से रोज प्रार्थना करता। एक दिन फकीर साहेब ने मुखिया से कहा : ''जहाँ से तुम्हें 'लगी' है उसी द्वार पर सवाली होकर जा। वहीं से तुम्हें मुक्ति मिलेगी। जिस दरवेश से तुम्हें 'लगी' उन तक पहुँचने की शक्ति मुझमें नहीं है। इसलिए तुम उधर ही जाकर क्षमायाचना करो।''

संत के दोखी को, कोई और न राखनहार।
नानक ! संत भावी, ता लिए उबार॥
(गुरुवाणी)

'संत के निंदक को कोई भी छुड़ा नहीं सकता। संतों का जो निरादर करता है उसकी कोई रक्षा नहीं कर सकता है। अगर वे संत स्वयं चाहें तो वे दया करके निंदक को बचा सकते हैं, बाकी किसी की ताकत नहीं है।'

आखिर मुखिया लज्जित होकर स्वामी सतरामदासजी के पास आया और उनके चरणकमलों में गिरकर क्षमा की भीख माँगने लगा। मुखिया को दिल से गिड़गिड़ाते हुए देखकर सतरामदासजी को उसकी हालत पर रहम आ गयी। उसको प्यार से समझाते हुए कहने लगे : ''मुखिया! इस बीमारी से तो तुम्हें ईश्वर ही बचा सकते हैं। बाकी हम इतना कर सकते हैं कि पहले जो मिर्गी का अचानक दौरा पड़ता था, अब तुम्हें उसका पहले पता चल जायेगा। दौरा पड़ने से पहले तुम्हारे हाथों में कुछ खुजलाहट जैसा प्रतीत होगा। उस समय तुम एकदम सावधान होकर अपने आपको सँभाल लेना।''

उसके बाद मुखिया को दौरा पड़ने से पहले पता चल जाता था और वह अपने आपको गिरने से बचा पाता था। संत के वचन में इतनी शक्ति थी कि मुखिया अंत तक इस रोग से संपूर्ण मुक्ति न पा सका।

ढिज़ संत जे गुफ़्तार खां,
जहिंजो वचन तिखो तलवार खां।

अर्थात्
डर संतों के गुफ़्तार से,
जिनका वचन तेज तलवार से।

(क्रमशः)

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी।

कर्मफल

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

भगवान कहते हैं :

'जन्म-मरण से छूटने के लिये जो मेरा आश्रय लेकर यत्न करते हैं, वे उस ब्रह्म को, संपूर्ण अध्यात्म को और संपूर्ण कर्म को भी जान जाते हैं।'

'कर्म स्वयं जड़ होते हैं... कर्त्ता को उसकी भावना के अनुसार फल मिलता है...' ऐसा समझना कर्मों को अखिल रूप से, सम्पूर्ण रूप से जानना हो गया।

कर्मों को पता नहीं कि : 'मैं कर्म हूँ।' शरीर को पता नहीं कि : 'मैं शरीर हूँ।' मकान को पता नहीं कि : 'मैं मकान हूँ।' यज्ञ को पता नहीं कि : 'मैं यज्ञ हूँ।' क्यों? क्योंकि सब जड़ हैं लेकिन कर्त्ता जिस भावना से जो-जो कार्य करता है उसे वैसा-वैसा फल मिलता है।

किसी दुष्ट ने आपको चाकू दिखा दिया तो आप थाने में उसके खिलाफ शिकायत करते हैं। कोई आपको केवल मारने की धमकी देता है तब भी आप उसके विरुद्ध शिकायत करते हैं लेकिन डॉक्टर न आपको धमकी देता है, न चाकू दिखाता है बल्कि चाकू आपके शरीर में घुमाता है, बहुत सारा खून निकाल देता है फिर भी आप उसे 'फीस' देते हैं। क्यों? क्योंकि उसका उद्देश्य अच्छा था। उद्देश्य था मरीज को ठीक करना, न कि दुश्मनी थी। ऐसे ही आप भी अपने कर्म का उद्देश्य बदल दो।

आप भोजन बनाओ लेकिन मजा लेने के लिये नहीं, बल्कि ठाकुरजी को प्रसन्न करने के लिये बनाओ। परिवार के लिये, पति के लिये, बच्चों के

लिये भोजन बनाओगे तो वह आपका व्यावहारिक कर्त्तव्य हो जायेगा लेकिन 'परिवारवालों की, पति की और बच्चों की गहराई में मेरा परमेश्वर है...' ऐसा समझकर परमेश्वर की प्रसन्नता के लिये भोजन बनाओगे तो वह बंदगी हो जायेगा, पूजा हो जायेगा, मुक्ति दिलानेवाला हो जायेगा।

वस्त्र पहनो तो शरीर की रक्षा के लिये, मर्यादा की रक्षा के लिये पहनो। यदि मजा लेने के लिये, फैशन के लिये वस्त्र पहनोगे, आवारा होकर घूमते फिरोगे तो वस्त्र पहनने का कर्म भी बंधनकारक हो जायेगा।

इसी प्रकार बेटे को खिलाया-पिलाया, पढ़ाया-लिखाया... यह तो ठीक है। 'बड़ा होकर मुझे सुख देगा...' ऐसा भाव रखोगे तो यह आपके लिये बंधन हो जायेगा।

सुख का आश्रय न लो। कर्म तो करो... कर्त्तव्य समझकर करोगे तो ठीक है लेकिन ईश्वर की प्रीति के लिये कर्म करोगे तो कर्म, कर्म न रहेगा, साधना हो जायेगा, पूजा हो जायेगा।

कल्पना करो : दो व्यक्ति क्लर्क की नौकरी करते हैं और दोनों को रू. ३०००-४००० मासिक वेतन मिलता है। एक कर्म करने की कला जानता है और दूसरा कर्म को विकर्म बना देता है। उसके घर बहन आयी दो बच्चों को लेकर क्योंकि पति के साथ उसकी अनबन हो गयी है। वह बोलता है : ''एक तो महँगाई है, ५०० रूपये मकान का किराया है, बाकी दूध का बिल, लाइट का बिल, बच्चों को पढ़ाना... और यह आ गयी दो बच्चों को लेकर ? मैं तो मर गया...'' इस तरह वह दिन-रात दुःखी होता रहता है। कभी अपने बच्चों को मारता है, कभी पत्नी को आँखें दिखाता है, कभी बहन को सुना देता है। वह खिन्न होकर कर्म कर रहा है, मजदूरी कर रहा है और बंधन में पड़ रहा है।

दूसरे व्यक्ति के पास उसकी बहन दो बच्चों को लेकर आयी। वह कहता है : ''बहन ! तुम संकोच मत करना। अभी जीजाजी का मन ऐसा-वैसा है तो कोई बात नहीं। जीजाजी का घर भी तुम्हारा है और यह घर भी तुम्हारा ही है। भाई भी तुम्हारा ही है।''

बहन : ''भैया ! मैं आप पर बोझ बनकर आ गयी हूँ।''

भाई : ''नहीं नहीं, बोझ किस बात का ? तू दो रोटी ही तो खाती है और काम में कितनी मदद करती है ! तेरे बच्चों को भी देख, मुझे 'मामा-मामा' बोलते हैं, कितनी खुशी देते हैं ! महँगाई है तो क्या हुआ ? मिल-जुलकर खाते हैं। ये दिन भी बीत जायेंगे। बहन ! तू संकोच मत करना और ऐसा मत समझना कि भाई पर बोझ पड़ता है। बोझ-वोझ क्या है ? यह भी भगवान ने अवसर दिया है सेवा करने का।''

यह व्यक्ति बहन की दुआ ले रहा है, पत्नी का धन्यवाद ले रहा है, माँ का आशीर्वाद ले रहा है और अपनी अंतरात्मा का संतोष पा रहा है। दूसरा व्यक्ति जल-भुन रहा है, माता की लानत ले रहा है, पत्नी की दुतकार ले रहा है और बहन की बददुआ ले रहा है।

कर्म तो दोनों एक-सा ही कर रहे हैं लेकिन एक प्रसन्न होकर कर रहा है, ईश्वर की सेवा समझकर कर रहा है और दूसरा खिन्न होकर कर रहा है, बोझ समझकर कर रहा है। कर्म तो वही है लेकिन भावना की भिन्नता ने एक को सुखी तो दूसरे को दुःखी कर दिया। अतः जो जैसे कर्म करता है, वैसा ही फल पाता है।

जलियाँवाला बाग में जनरल डायर ने जो जुल्म किया, इतने निर्दोष लोगों की हत्या की। क्यों ? उसने सोचा था कि : 'इस प्रकार आजादी के नारे लगानेवालों को जलियाँवाला बाग में नष्ट कर दूँगा तो मेरा नाम होगा, मेरी पदोन्नति होगी...' लेकिन नाम और पदोन्नति तो क्या, लानतों की बौछारें पड़ीं उस पर। उससे त्यागपत्र माँगा गया, नौकरी से निकाला गया, उसको शाही महल से ढकेल दिया गया। अंत में भारतवासियों के उस हत्यारे को भारत के बहादुर वीर ऊधम सिंह ने गोली मारकर नरक की ओर धकेल दिया। मरने के बाद भी कितने हजार वर्षों तक वह प्रेत की योनि में भटकेगा, यह तो भगवान ही जानते हैं।

जापान के हिरोशिमा एवं नागासाकी शहर पर बम गिरानेवाले मेजर टॉम फेरेबी का भी बड़ा बुरा

हाल हुआ। जब वह घर पहुँचा तो उसकी दादी माँ ने कहा : ''तू अमानवीय कर्म करके आया है।'' उसकी अंतरात्मा ग्लानि से फटी जा रही थी। उसने तो इतने दुःख देखे कि इतिहास उसकी दुःखद आत्मकथा से भरा पड़ा है।

जब बुरा कर्म करते हैं तो उसका फल तुरंत चाहे न भी मिले लेकिन देर-सबेर मिलता ही है। ऐसे ही जब अच्छे कर्म करते हैं तो हृदय में सुख-शांति का एहसास तुरंत होता है एवं देर-सबेर उसमें अच्छे संस्कार ही पड़ते हैं।

अतः मनुष्य को चाहिए कि वह बुरे कर्मों से तो बचे लेकिन अच्छे कर्म भी ईश्वर की प्रीति के लिये करे। कर्म करके सुख लेने की, वाहवाही लेने की वासना को छोड़कर सुख देने की, ईश्वर पाने की भावना लगा दीजिये। ऐसा करने से आपके कर्म ईश्वर-प्रीत्यर्थ हो जायेंगे। ईश्वर की प्रीति के लिये किये गये कर्म फिर जन्म-मरण के बंधन में नहीं डालेंगे वरन् मुक्ति दिलाने में सफल हो जायेंगे।
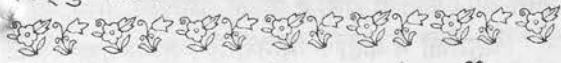
संतों का संग अमोघ है।

शक्कर के खिलौनों को जहाँ-तहाँ से चखो, शक्कर ही मिलेगी क्योंकि खिलौने वास्तव में शक्कर ही हैं। गहने वास्तव में स्वर्ण ही हैं। इसी प्रकार ब्रह्मवेत्ता भी ब्रह्मस्वरूप होते हैं। ब्रह्मवेत्ताओं का कण-कण ब्रह्मसुख से पावन होता है। उनके श्रीचरण जिस मिट्टी पर पड़ते हैं उस मिट्टी का तिलक लगाकर भी लोग अपना भाग्य बना लेते हैं। ऐसे ब्रह्मवेत्ताओं में जो लोग श्रद्धा-भक्ति रखते हैं वे तो खूब लाभ उठाते हैं किन्तु जो उन्हें नहीं मानते हैं उन्हें भी लाभ होता ही है। जैसे, कोई हिन्दू गंगाजी में श्रद्धा से स्नान करता है तो उसे पुण्य होता है और किसी मुसलमान को जबरन गंगाजी में धक्का दे दिया जाये तो उसे भी गंगाजी की शीतलता का, शरीर की स्वच्छता का और स्वस्थता का लाभ तो हो ही जाता है। इसी प्रकार संतों का संग, ब्रह्मज्ञानियों का संग कभी व्यर्थ नहीं जाता है।

आत्मविद्या की धनी : फुलीबाई

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

[गतांक का शेष...]

शास्त्रों में शृंगार करने की मनाही नहीं है परन्तु सात्त्विक शृंगार करो, पवित्र शृंगार करो, मर्यादित शृंगार करो। जैसा वैदिक काल में शृंगार होता था, ऐसा शृंगार करो। पहले वनस्पतियों में से शृंगार के ऐसे साधन बनाये जाते थे जिनसे मन प्रफुल्लित एवं पवित्र रहता था, तन निरोग रहता था। जैसे कि पैर में पायल पहनने से अमुक नाड़ी पर दबाव पड़ता था एवं उससे ब्रह्मचर्य व्रत में मदद मिलती थी। जैसे ब्राह्मण लोग जनेऊ पहनते हैं एवं पेशाब करते समय कान पर जनेऊ लपेटते हैं तो उस नाड़ी पर दबाव पड़ने से उन्हें स्वप्नदोष की बीमारी नहीं होती। शृंगार भी ऐसा था कि शरीर मजबूत रहे, मन प्रसन्न रहे। ऐसी वैदिक संस्कृति थी।

आज कल तो पाश्चात्य जगत के ऐसे गंदे शृंगारों का प्रचार बढ़ गया है कि शरीर तो रोगी हो ही जाता है, साथ ही मन भी विकारग्रस्त हो जाता है। शृंगार करनेवाली जिस दिन शृंगार नहीं करती उस दिन उसका चेहरा बूढ़ी बंदरी जैसा दिखता है। चेहरे की कुदरती कोमलता नष्ट हो जाती है। पावडर, लिपस्टिक वगैरह से त्वचा की प्राकृतिक स्निग्धता नष्ट हो जाती है।

प्राकृतिक सौन्दर्य को नष्ट करके जो कृत्रिम सौन्दर्य के गुलाम बनते हैं, उनसे प्रार्थना है कि वे

कृत्रिम प्रसाधनों का प्रयोग करके अपने प्राकृतिक सौन्दर्य को नष्ट न करें। चूड़ियाँ पहनने की, कुमकुम का तिलक करने की मनाही नहीं है, परंतु पफ-पावडर, लिपस्टिक-लाली लगाकर, चमकीले-भड़कीले वस्त्र पहनकर अपने शरीर का, मन का, कुटुम्बियों का एवं समाज का अहित न हो, ऐसी कृपा करें। अपने असली सौन्दर्य को प्रगट करें, अपने हृदय का, अपने चारित्र्य का सौन्दर्य प्रगट करें। जैसे मीरा ने किया था, गार्गी और मदालसा ने किया था।

फुलीबाई ने उन रानियों को कहा :

''हे रानियों ! तुम इधर-उधर क्या देखती हो ? ये गहने-गाँठें तो तुम्हारे शरीर की शोभा हैं और यह शरीर एक दिन मिट्टी में मिल जानेवाला है। उसे सजा-धजाकर कब तक अपने जीवन को नष्ट करती रहोगी ? विषय-विकारों में कब तक खपती रहोगी ? अब तो श्रीराम का भजन कर लो। अपने वास्तविक सौन्दर्य को प्रगट कर लो।

गहनो गाँठो तन री शोभा, काया काचो भाँडो।
'फुली' कहे थे राम भजो नित, लड़ो क्यों हो राँडो ?

'गहने-गाँठें शरीर की शोभा हैं और शरीर मिट्टी के कच्चे बर्तन जैसा है। अतः प्रतिदिन राम का भजन करो। इस तरह व्यर्थ लड़ने से क्या लाभ ?'

विषय-विकार की गुलामी छोड़ो, हार-शृंगार की गुलामी छोड़ो एवं पा लो उस परमेश्वर को, जो परम सुंदर है।''

राजा यशवंतसिंह के रनिवास में फुलीबाई की कितनी हिम्मत है ! रानियों को सत्य सुनाकर फुलीबाई अपने गाँव की तरफ चल पड़ीं।

बाहर से भले कोई अनपढ़ दिखे, निर्धन दिखे परंतु जिसने अंदर का राज्य पा लिया है वह धनवानों को भी दान करने की क्षमता रखता है और विद्वानों को भी अध्यात्म-विद्या प्रदान कर सकता है। उसके थोड़े-से आशीर्वाद मात्र से धनवानों के धन की रक्षा हो जाती है, विद्वानों में आध्यात्मिक विद्या प्रगट होने लगती है। आत्मविद्या में, आत्मज्ञान में ऐसा अनुपम-अद्भुत सामर्थ्य है और इसी सामर्थ्य से संपन्न थीं फुलीबाई। *

एकादशी माहात्म्य

[पद्मा एकादशी : ९ सितम्बर २०००]

युधिष्ठिर ने पूछा : ''केशव ! कृपया यह बताइये कि भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष में जो एकादशी होती है, उसका क्या नाम, कौन देवता और कैसी विधि है ?''

भगवान श्रीकृष्ण बोले : ''राजन् ! इस विषय में मैं तुम्हें आश्चर्यजनक कथा सुनाता हूँ, जिसे ब्रह्माजी ने महात्मा नारद से कहा था।

नारदजी ने पूछा : 'चतुर्मुख ! आपको नमस्कार है ! मैं भगवान विष्णु की आराधना के लिये आपके मुख से यह सुनना चाहता हूँ कि भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष में कौन-सी एकादशी होती है ?'

ब्रह्माजी ने कहा : 'मुनिश्रेष्ठ ! तुमने बहुत उत्तम बात पूछी है। क्यों न हो, वैष्णव जो ठहरे ! भादों के शुक्ल पक्ष की एकादशी 'पद्मा' के नाम से विख्यात है। उस दिन भगवान हृषीकेश की पूजा होती है। यह उत्तम व्रत अवश्य करने योग्य है। सूर्यवंश में मान्धाता नामक एक चक्रवर्ती, सत्यप्रतिज्ञ और प्रतापी राजर्षि हो गये हैं। वे अपने औरस पुत्रों की भाँति धर्मपूर्वक प्रजा का पालन किया करते थे। उनके राज्य में अकाल नहीं पड़ता था, मानसिक चिन्ताएँ नहीं सताती थीं और व्याधियों का प्रकोप भी नहीं होता था। उनकी प्रजा निर्भय तथा धन-धान्य से समृद्ध थी। महाराज के कोष में केवल न्यायोपार्जित धन का ही संग्रह था। उनके राज्य में समस्त वर्णों और आश्रमों के लोग अपने-अपने धर्म में लगे रहते थे। मान्धाता के राज्य की भूमि कामधेनु के समान फल देनेवाली थी। उनके राज्यकाल में प्रजा को बहुत सुख प्राप्त होता था।

एक समय किसी कर्म का फलभोग प्राप्त होने पर राजा के राज्य में तीन वर्षों तक वर्षा नहीं हुई। इससे उनकी प्रजा भूख से पीड़ित हो नष्ट होने लगी। तब सम्पूर्ण प्रजा ने महाराज के पास आकर इस प्रकार कहा :

प्रजा बोली : 'नृपश्रेष्ठ ! आपको प्रजा की बात सुननी चाहिए। पुराणों में मनीषी पुरुषों ने जल को 'नार' कहा है। वह नार ही भगवान का अयन (निवास-स्थान) है, इसलिये वे 'नारायण' कहलाते हैं। नारायणस्वरूप भगवान विष्णु सर्वत्र व्यापकरूप में विराजमान हैं। वे ही मेघस्वरूप होकर वर्षा करते हैं, वर्षा से अन्न पैदा होता है और अन्न से प्रजा जीवन धारण करती है। नृपश्रेष्ठ ! इस समय अन्न के बिना प्रजा का नाश हो रहा है, अतः ऐसा कोई उपाय कीजिये, जिससे हमारे योगक्षेम का निर्वाह हो।'

राजा ने कहा : 'आप लोगों का कथन सत्य है, क्योंकि अन्न को ब्रह्म कहा गया है। अन्न से प्राणी उत्पन्न होते हैं और अन्न से ही जगत जीवन धारण करता है। लोक में बहुधा ऐसा सुना जाता है तथा पुराण में भी बहुत विस्तार के साथ ऐसा वर्णन है कि राजाओं के अत्याचार से प्रजा को पीड़ा होती है, किन्तु जब मैं बुद्धि से विचार करता हूँ तो मुझे अपना किया हुआ कोई अपराध नहीं दिखाई देता। फिर भी मैं प्रजा का हित करने के लिए पूर्ण प्रयत्न करूँगा।'

ऐसा निश्चय करके राजा मान्धाता इने-गिने व्यक्तियों को साथ ले विधाता को प्रणाम करके सघन वन की ओर चल दिये। वहाँ जाकर मुख्य-मुख्य मुनियों और तपस्वियों के आश्रमों पर घूमते फिरे। एक दिन उन्हें ब्रह्मपुत्र अंगिरा ऋषि का दर्शन हुआ। उन पर दृष्टि पड़ते ही राजा हर्ष में भरकर अपने वाहन से उतर पड़े और इन्द्रियों को वश में रखते हुए दोनों हाथ जोड़कर उन्होंने मुनि के चरणों में प्रणाम किया। मुनि ने भी 'स्वस्ति' कहकर राजा का अभिनन्दन किया और उनके राज्य के सातों अंगों की कुशलता पूछी। राजा ने अपनी कुशलता बताकर मुनि के स्वास्थ्य का समाचार पूछा। मुनि ने राजा को आसन और अर्घ्य दिया। उन्हें ग्रहण करके जब वे मुनि के समीप बैठे तो उन्होंने इनके आगमन का कारण पूछा।

राजा ने कहा : 'भगवन् ! मैं धर्मानुकूल प्रणाली से पृथ्वी का पालन कर रहा था। फिर भी मेरे राज्य में वर्षा का अभाव हो गया। इसका क्या कारण है इस बात को मैं नहीं जानता।'

ऋषि बोले : 'राजन् ! सब युगों में उत्तम यह सत्ययुग है। इसमें सब लोग परमात्मा के चिन्तन में लगे रहते हैं तथा इस समय धर्म अपने चारों चरणों से युक्त होता है। इस युग में केवल ब्राह्मण ही तपस्वी होते हैं, दूसरे लोग नहीं। किन्तु महाराज ! तुम्हारे राज्य में एक शूद्र तपस्या करता है, इसी कारण मेघ पानी नहीं बरसाते। तुम इसके प्रतिकार का यत्न करो, जिससे यह अनावृष्टि का दोष शांत हो जाय।'

राजा ने कहा : 'मुनिवर ! एक तो वह तपस्या में लगा है और दूसरे, वह निरपराध है। अतः मैं इसका अनिष्ट नहीं करूँगा। आप उक्त दोष को शांत करनेवाले किसी धर्म का उपदेश कीजिये।'

ऋषि बोले : 'राजन् ! यदि ऐसी बात है तो एकादशी का व्रत करो। भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष में जो 'पद्मा' नाम से विख्यात एकादशी होती है, उसके व्रत के प्रभाव से निश्चय ही उत्तम वृष्टि होगी। नरेश ! तुम अपनी प्रजा और परिजनों के साथ इसका व्रत करो।'

ऋषि का यह वचन सुनकर राजा अपने घर लौट आये। उन्होंने चारों वर्णों के समस्त प्रजाओं के साथ भादों के शुक्ल पक्ष की 'पद्मा' एकादशी का व्रत किया। इस प्रकार व्रत करने पर मेघ पानी बरसाने लगे। पृथ्वी जल से आप्लावित हो गई और हरी-भरी खेती से सुशोभित होने लगी। उस व्रत के प्रभाव से सब लोग सुखी हो गये।''

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं : ''राजन् ! इस कारण इस उत्तम व्रत का अनुष्ठान अवश्य करना चाहिए। 'पद्मा' एकादशी के दिन जल से भरे हुए घड़े को वस्त्र से ढँककर दही और चावल के साथ ब्राह्मण को दान देना चाहिए, साथ ही छाता और जूता भी देना चाहिए। दान करते समय निम्नांकित मंत्र का उच्चारण करना चाहिए :

नमो नमस्ते गोविन्द बुधश्रवणसंज्ञक ॥
अघौघसंक्षयं कृत्वा सर्वसौख्यप्रदो भव ।
भुक्तिमुक्तिप्रदश्चैव लोकानां सुखदायकः ॥

'बुधवार और श्रवण नक्षत्र के योग से युक्त द्वादशी के दिन बुद्धश्रवण नाम धारण करनेवाले भगवान् गोविन्द ! आपको नमस्कार है... नमस्कार है ! मेरी पापराशि का नाश करके आप मुझे सब प्रकार के सुख प्रदान करें। आप पुण्यात्माजनों को भोग और मोक्ष प्रदान करनेवाले तथा सुखदायक हैं।' (पद्मपुराण : ५९.३८-३९)

राजन् ! इसके पढ़ने और सुनने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है।''

['पद्म पुराण' से]

हमें अलग-अलग प्रकार के दुःख, कष्ट एवं चिंताएँ सहन करनी पड़ती हैं। शरीर एवं मन के क्लेश सहन करने पड़ते हैं। हम त्रिविध ताप में जलते रहते हैं। इन सबका कारण केवल एक ही है कि हम अज्ञानतावश परमेश्वर की अपेक्षा इस नाम-रूपात्मक, मिथ्या, मायिक जगज्जंजाल में अधिक प्रेम, अधिक आसक्ति, अधिक विश्वास एवं अधिक श्रद्धा करते हैं।

इन्द्रियों ने जिन बातों को सत्य दिखाकर तुम्हारे अंतःकरण में उनके प्रति मजबूत विश्वास बिठा दिया है, वे सब इन्द्रियगोचर वस्तुएँ भी वास्तव में वस्तु नहीं, अवस्तु हैं। अतः इन्द्रियों के आकर्षण में मत फँसो।

कोई तुम्हारा नाम रखे, कोई तुम्हारे ऊपर टीका-टिप्पणी करे, कोई तुम्हें गाली दे, कोई तुम्हारी प्रशंसा करके तुम्हें ऊपर चढ़ाये अथवा निंदा करके नीचे उतारे तब भी तुम इनमें से किसी फँसाव में फँसना मत। ये वस्तुएँ एवं निंदा-प्रशंसा आदि सब मिथ्या हैं।

बाह्य वस्तुओं एवं व्यक्तियों के प्रति जो मोह है उसको अंतःकरण से उखाड़कर फेंक दो एवं उनमें जो श्रद्धा है उसको जड़-मूल से निकाल दो। यदि ऐसा करोगे तो समग्र जगत पलटा हुआ नजर आयेगा। तुम्हारे सब संकट, सब प्रकार की चिंताएँ एवं दुःख पलायन कर जायेंगे, विलुप्त हो जायेंगे। पहले की विषम परिस्थिति पलटी हुई मिलेगी। जगत का भ्रमजाल टूट जायेगा। इस बात को दिल में उतारो। अपने आत्मा-परमात्मा का दिव्य अनुभव करो। जरा-जरा बात में आकर्षित-विकर्षित होना यह छोटे व्यक्तित्व की पहचान है। जागो, महान् आत्मा!

*

नवरात्रि में गरबा

[नवरात्रि दिनांक : २८ सितम्बर से ६ अक्तूबर २०००]

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

शास्त्रों में आता है :

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिताः ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥

'जो सभी भूतों में शक्तिरूप से स्थित हैं उन माँ जगदम्बा को नमस्कार है... नमस्कार है... नमस्कार है !'

ईश्वर अनेक रूपों में प्रगट होता है, वैसे ही मातृरूप में भी प्रगट होता है। शक्तिरूप से, करुणारूप से, क्षमारूप से, दयारूप से उत्पन्न होनेवाली परब्रह्म परमात्मा की जो वृत्ति है उसीको 'माँ' कहा गया है एवं उन्हीं 'माँ' की उपासना-अर्चना के दिन हैं नवरात्रि के दिन।

नवरात्रि के दिनों में व्रत-उपवास, माँ की उपासना-अर्चना के अतिरिक्त गरबे गाये जाते हैं। गरबे क्यों गाये जाते हैं ? पैर के तलुओं एवं हाथ की हथेलियों में शरीर की सभी नाड़ियों के केन्द्रबिन्दु हैं जिन पर दबाव पड़ने से 'एक्युप्रेशर' का लाभ मिल जाता है एवं शरीर में नयी शक्ति-स्फूर्ति जाग जाती है। नृत्य से प्राण-अपान की गति सम होती है तो सुषुप्त शक्तियों को जागृत होने का अवसर मिलता है एवं गाने से हृदय में माँ के प्रति दिव्य भाव उमड़ता है इसीलिये नवरात्रि के दिनों में गरबे गाने की प्रथा है।

...लेकिन बहुत गाने से शक्ति क्षीण होती है अतः गाओ तो ऐसा गाओ कि आपका आत्मबल बढ़े, ओज-तेज बढ़े एवं सुषुप्त शक्ति जागृत हो।

गरबा गाते-गाते आप ऐसे रहो कि आपकी इन्द्रियाँ आपको कहीं खींचें नहीं, मन आपको धोखा न दे, बुद्धि विकारों की तरफ न ले जाये वरन् मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार ये चार अंतःकरण एवं पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ ये नौ-के-नौ उस परब्रह्म परमात्मा में डूब जायें और नृत्य के बाद भावसमाधि का थोड़ा-सा आनंद उभरने लगे, काम-विकार पलायन हो जायें, रामरस आने लगे। यदि ऐसा कर सको तो नवरात्रि सफल हो जायेगी।

संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा आयोजित सहस्राब्दी विश्वशांति शिखर सम्मेलन के नाम

पू. बापू का पावन संदेश

विश्व में अनेक देश हैं और सभी देशों में विविध मनुष्य-समाज एवं जातियाँ हैं, सब जातियों की अपनी-अपनी संस्कृति, इतिहास, धर्म, पंथ, सिद्धांत, विचारधाराएँ, वेश-भूषा, सामाजिक रीत-रिवाज, मान्यताएँ आदि हैं और सबको अपनी इन चीजों से सहज लगाव होता है। ईश्वरीय सृष्टि में यह वैविध्य प्राकृतिक ढंग से ही है। अतः सब धर्म, पंथ आदि एक नहीं हो सकते, सब पार्टियाँ एक नहीं हो सकतीं फिर भी सबमें छुपा हुआ विश्वचैतन्य एक है। उस एक विश्वचैतन्य के नाते, मानवता के नाते सभी मनुष्यों के बीच स्नेह हो सकता है, परस्पर प्रेमभाव हो सकता है, 'विविधता में एकता' स्थापित हो सकती है। इसी प्लेटफॉर्म पर हमें सभी की उन्नति, सभी का मंगल, सभी का कल्याण सोचना और करना चाहिए। इसीमें संपूर्ण मानव-समुदाय का सच्चा कल्याण निहित है।

जो लोग अन्य धर्मों एवं उनके देवी-देवताओं की निंदा करते हैं वे अपने धर्म के दायरे में लोगों को घसीटना चाहते हैं। धर्मान्तरण करवाने की उनकी इस प्रवृत्ति के पीछे उनके उद्देश्यों मे स्वार्थ और कपट छुपे हुए हैं जो विश्वमानव के साथ अन्याय है। देशकल्याण और विश्वकल्याण की बातें करनेवाले लोगों को चाहिए कि वे अपने हृदय को वेदान्त के उदार विचारों से भरें, नहीं तो देशकल्याण एवं विश्वकल्याण का भाषण देनेवाले नेता देशकल्याण एवं विश्वकल्याण के नाम पर अपने दायरे के कल्याण में ही उलझ जाते हैं। ऐसे धार्मिक मंच की रचना करनेवाले लोग अपने 'कल्चर' (संस्कृति) में ही उलझ जाते हैं।

अतः सभी धर्म-प्रचारकों और राजनेताओं को चाहिए कि वे मानव-मानव के प्रति स्नेह, सद्भाव और सहयोग की भावना से ओतप्रोत उपदेश व भाषण दें, न कि वैयक्तिक एवं किसी एक जाति, धर्म या देश की संकीर्णता में उलझकर तथा अपनी कुर्सी, अपना वैयक्तिक पंथ, मजहब, संप्रदाय को केन्द्र में रखकर 'अपनी ढपली अपना राग' वाली बात करके पूरी मानव जाति में विसंवाद की हवा फैलाएँ। विश्वमानव के कल्याण को दृष्टिगत रखकर प्रयास करने से ही वास्तव में विश्वशांति की स्थापना हो सकती है।

अतः हम सभी निम्नलिखित बातों पर ध्यान दें :

* चलचित्रों के द्वारा आतंकवाद को बढ़ानेवाले दृश्य न दिखाये जायें। प्रेम, एकता, भाईचारा बढ़ानेवाले दृश्य दिखाये जायें।

* आतंकवाद को निर्मूल करने के लिए हम एकजुट हों।

* पर्यावरण प्रदूषण-निवारण के लिए भी हम सभी एकजुट हों।

* गरीबों को हम सब मददरूप हों।

* स्वस्थ जीवन, सुखी जीवन, सम्मानित जीवन जीने के लिए क्या करें ? :

(१) स्वस्थ जीवन जीने के लिए यौगिक प्रयोग सीखें, अपनाएँ और करें।

(२) सुखी जीवन के लिए ध्यानयोग द्वारा आत्मसुख पायें।

(३) सम्मानित जीवन जीने के लिए दूसरों को मान दें, सर्वहित के कार्य करें।

*

शरद ऋतु

शरद ऋतु स्वच्छता के बारे में सावधान रहने की ऋतु है अर्थात् इस मौसम में स्वच्छता रखने की खास जरूरत है। रोगाणाम् शारदी माता:। अर्थात् शरद ऋतु रोगों की माता है।

भाद्रपद एवं आश्विन ये शरद ऋतु के दो महीने हैं। शरद ऋतु में स्वाभाविक रूप से ही पित्तप्रकोप होता है। इससे इन दो महीनों में ऐसा ही आहार एवं औषधि लेनी चाहिए जो पित्त का शमन करे। युवानी में एवं मध्याह्न के समय पित्त बढ़ता है। तीखे, नमकीन, खट्टे, गरम एवं दाह उत्पन्न करनेवाले द्रव्यों के सेवन से, मद्यपान से, क्रोध अथवा भय से, धूप में घूमने से, रात्रिजागरण एवं अधिक उपवास से भी पित्त बढ़ता है। दही, खट्टी छाछ, इमली, टमाटर, नींबू, कच्चे आम, मिर्ची, लहसुन, राई, खमीर लाकर बनाये गये व्यंजन एवं उड़द जैसी चीजें भी पित्त की वृद्धि करती हैं।

❊ सावधानियाँ ❊

❊ श्राद्ध के दिनों में १६ दिन तक दूध, चावल, खीर का सेवन पित्तशामक है। परवल, मूँग, पका पीला पेठा (कद्दू) आदि का भी सेवन कर सकते हैं।

❊ दूध के विरुद्ध पड़नेवाले आहार जैसे कि सभी प्रकार की खटाई, लहसुन, अदरक, नमक, मांसाहार आदि का त्याग करें। दही, छाछ, भिंडी, ककड़ी आदि अम्लविपाकी (पचने पर खटास उत्पन्न करनेवाली) चीजों का सेवन न करें।

❊ कड़वा रस पित्तशामक एवं ज्वर-प्रतिरोधी है। अतः कटुकी, चिरायता, नीम की अंतरछाल, गुडुच, करेले, सुदर्शन, इन्द्रजौ आदि का सेवन हितावह है।

❊ धूप में न घूमें। श्राद्ध के दिनों में एवं नवरात्रि में पितृपूजन हेतु संयमी रहना चाहिए। कड़क ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। **'यौवन सुरक्षा'** पुस्तक का पाठ करने से ब्रह्मचर्य में मदद मिलेगी।

❊ इन दिनों में रात्रिजागरण, रात्रिभ्रमण अच्छा होता है इसीलिए नवरात्रि वगैरह का आयोजन किया जाता है। रात्रिजागरण १२ बजे तक का ही माना जाता है। अधिक जागरण से, सुबह एवं दोपहर को सोने से त्रिदोष प्रकुपित होते हैं जिससे स्वास्थ्य बिगड़ता है।

❊ हमारे दूरदर्शी ऋषि-मुनियों ने शरदपूनम जैसा त्यौहार भी इस ऋतु में विशेषकर स्वास्थ्य की दृष्टि से ही आयोजित किया है। शरदपूनम के दिन रात्रिजागरण, रात्रिभ्रमण, मनोरंजन आदि को उत्तम पित्तनाशक विहार के रूप में आयुर्वेद ने स्वीकार किया है।

❊ शरदपूनम की शीतल रात्रि में चंद्रमा की किरणों में छत पर रखी हुई दूध-पोहे अथवा दूध-चावल की खीर सर्वप्रिय, पित्तशामक, शीतल एवं सात्त्विक आहार है। इस रात्रि को ध्यान, भजन, सत्संग, कीर्तन, चंद्रदर्शन आदि शारीरिक व मानसिक आरोग्यता के लिये अत्यंत लाभदायक हैं।

❊

पपीता

फरवरी-मार्च एवं मई से अक्तूबर तक के महीनों में बहुतायत से पाया जानेवाला फल पपीता आयुर्वेद की दृष्टि से एक उत्तम फल है।

पके हुए पपीते स्वाद में मधुर, रुचिकारक, पित्तदोषनाशक, पचने में भारी, गुण में गरम, स्निग्धतावर्धक, दस्त साफ लानेवाले, वीर्यवर्धक, हृदय के लिये हितकारी, वायुदोषनाशक, मूत्र साफ लानेवाले एवं पागलपन, यकृत-वृद्धि, तिल्ली-वृद्धि, अग्निमांद्य, आँतों के कृमि एवं उच्च रक्तचाप आदि रोगों को मिटानेवाले होते हैं।

आधुनिक विज्ञान के मतानुसार पपीते में विटामिन 'ए' पर्याप्त मात्रा में होता है। इसका सेवन शारीरिक वृद्धि एवं आरोग्यता की रक्षा करता है।

पके हुए पपीते में विटामिन 'सी' की भी अच्छी मात्रा होती है।

बालकों को होनेवाला सूखा रोग (Rickets) भी इसके सेवन से मिटता है। पपीते को शहद के साथ खाने से पोटैशियम तथा विटामिन 'ए', 'बी', 'सी' की कमी दूर होती है। खूनी बवासीर, कब्जियत, टी. बी., कैन्सर, अल्सर, एसिडिटी, मासिक स्राव की अनियमितता, डायबिटीज, अस्थि-क्षय (Bone T.B.) जैसे रोग इसके सेवन से मिटते हैं।

लिटन बर्नार्ड नामक एक डॉक्टर का मंतव्य है कि 'एन्टीबायोटिक' (प्रतिजैविक) दवाएँ लेने से आँतों में रहनेवाले शरीर के मित्र जीवाणु नष्ट हो जाते हैं जबकि पपीते का रस लेने से उन लाभकर्त्ता जीवाणुओं की पुनः वृद्धि होती है।

पपीता खाने के बाद अजवायन चबाने अथवा उसका चूर्ण लेने से फोड़े-फुंसी, पसीने की दुर्गंध, अजीर्ण के दस्त एवं पेट के कृमि आदि का नाश होता है। इससे शरीर निरोग, पुष्ट एवं स्फूर्त बनता है। छोटे बच्चों को नियमित रूप से पपीता खिलाने से उनका कद बढ़ता है, शरीर मजबूत एवं तंदुरुस्त बनता है।

कच्चे पपीते आँतों का संकोचन करनेवाले, कफ तथा वायुदोषवर्धक, पित्तकारक होते हैं।

पपीते का दूध कृमिनाशक, पीड़ाशामक, दूध बढ़ानेवाला, कोढ़ एवं पेट के दर्द मिटानेवाला है।

पपीते के बीज दाहशामक, आंत्र-कृमिनाशक, तृषाशामक एवं बिच्छू का विष नष्ट करनेवाले हैं।

सावधानी : पपीता अत्यंत गुणकारी है फिर भी कुछ अवस्थाओं में इसका सेवन नहीं करना चाहिए। जैसे, सगर्भावस्था में, मासिक धर्म अधिक आने की अवस्था में, गर्मी की बीमारियों में, खूनी बवासीर एवं गर्म तासीरवालों, पित्त एवं रक्तविकारवालों को पपीते का सेवन नहीं करना चाहिए।

❊ औषधि-प्रयोग ❊

१. बालकों का अल्प विकास : नाटे, अविकसित एवं दुबले-पतले बालकों को रोज पका हुआ पपीता उचित मात्रा में खिलाने से उनकी लम्बाई बढ़ती है, शरीर मजबूत एवं तन्दुरुस्त बनता है।

२. मंदाग्नि-अजीर्ण : रोज सुबह खाली पेट पपीते की फाँक पर नींबू, नमक एवं काली मिर्च अथवा संतकृपा चूर्ण भुरभुराकर खाने से मंदाग्नि, अरुचि तथा अजीर्ण मिटता है।

३. यकृत एवं तिल्ली बढ़ने पर : कच्चे पपीते को सुखाकर चूर्ण बना लें। सुबह-शाम इस चूर्ण की ५-५ ग्राम की मात्रा का सेवन करना लाभप्रद है। इससे यकृत-प्लीहा की बढ़ी हुई अवस्था शनैः शनैः अपनी प्राकृतिक अवस्था में आ जाती है।

४. बवासीर-अर्श : वायु-कफ के कारण हुए बवासीर में नियमितरूप से पपीते का सेवन करने से लाभ होता है। पपीते का दूध रोज बवासीर पर लगाना चाहिए।

५. मुहाँसे : पके हुए पपीते का गर्भ चेहरे की खील पर रोज लगायें। इसे लगाने के १५-२० मिनट बाद चेहरा गरम पानी से धो लें। इससे खीलें मिटती हैं।

६. दूध की कमी : जिन माताओं को दूध कम आता है वे अगर नियमित रूप से पपीते का सेवन करें तो लाभ होता है।

७. कृमि : कच्चे पपीते की सब्जी अथवा उसका रायता बनाकर खिलायें अथवा उबलते हुए पानी में उसका दूध ५ से १० मि.ली. डालें और थोड़ा शहद मिलाकर रोगी को पिला दें। इसके दो घण्टे के बाद उसे कोई जुलाब दें। दवा पीने के बाद यदि पेट में मरोड़-दर्द उठे तो नींबू का रस एवं मिश्री दें। इससे पेट के कृमि मिटेंगे।

८. डिप्थीरिया : पपीते के दूध अथवा दूध के पावडर को पानी में घोलकर गले में चुपड़ने से जीवाणुओं द्वारा स्वरयंत्र के द्वार पर बनाया गया सफेद पतला पर्दा दूर होता है एवं मरीज को आराम

मिलता है ।

९. कब्जियत : प्रतिदिन सुबह-शाम पका पपीता खाने से वर्षों पुरानी कब्जियत मिटती है ।

१०. बिच्छू का डंक : पपीते के फल का दूध या उसके बीज पीसकर डंक लगे हुए अंग पर लगाने से राहत मिलती है ।

११. हृदयरोग : पपीते के सूखे पत्तों की चाय अथवा उसका काढ़ा बनाकर प्रतिदिन पीने से लाभ होता है । यह काढ़ा ज्वर में भी लाभदायक है ।

१२. पथरी : पपीते के मूल के २० ग्राम अधकुटे चूर्ण को एक कप पानी में ६ घंटे तक भिगोकर रखें । फिर उसे मसल-छानकर एवं उसमें मिश्री मिला लें । सुबह-शाम पियें । इस प्रयोग से पथरी पिघलकर मूत्रमार्ग के द्वारा बाहर निकल जाती है ।

१३. दाद-खाज-खुजली : पपीते के दूध अथवा उसके पावडर में सुहागा मिलाकर दाद-खाज-खुजली पर लगाने से लाभ होता है ।

*

स्वास्थ्य-सुरक्षा के छोटे-छोटे नियम

अन्न, जल और हवा से हमारा शरीर जीवनशक्ति बनाता है । स्वादिष्ट अन्न व स्वादिष्ट व्यंजनों की अपेक्षा साधारण भोजन स्वास्थ्यप्रद होता है । खूब चबा-चबाकर खाने से यह अधिक पुष्टि देता है, व्यक्ति निरोगी व दीर्घजीवी होता है । वैज्ञानिक बताते हैं कि पानी में केवल हाइड्रोजन और ऑक्सीजन के सिवाय उसमें जीवनशक्ति भी है । एक प्रयोग के अनुसार कृत्रिम हाइड्रोजन व ऑक्सीजन से कृत्रिम पानी बनाया गया जिसमें खास स्वाद न था । मछली व जलीय प्राणी उसमें जीवित न रह सके ।

बोतलों में रखे हुए पानी की जीवनशक्ति क्षीण हो जाती है । अगर उसे उपयोग में लाना हो तो ८-१० बार एक बर्तन से दूसरे बर्तन में उड़ेलना (फेटना) चाहिए । इससे उसमें स्वाद और जीवनशक्ति दोनों आ जाते हैं । बोतलों में रखे हुए व फ्रिज में रखे हुए पानी स्वास्थ्य के शत्रु हैं । जल जल्दी-जल्दी नहीं पीना चाहिए । चुसकी लेते हुए घूँट-घूँटकर पीना चाहिए जिससे पोषक तत्त्व मिलें ।

ऐसे ही वायु में भी जीवनशक्ति है । रोज सुबह-शाम खाली पेट खड़े हुए या बैठे हुए शुद्ध हवा में लंबे श्वास खींचना चाहिए । श्वास को करीब आधा मिनट रोकें, फिर धीरे-धीरे छोड़ें । बाहर कुछ देर रोकें, फिर लें । इस प्रकार तीन प्राणायाम से शुरू करके धीरे-धीरे पंद्रह तक पहुँचें । इससे जीवनशक्ति बढ़ेगी, स्वास्थ्य-लाभ होगा, प्रसन्नता बढ़ेगी ।

पूज्य बापू सार बात कहते हैं, विस्तार नहीं करते । ९३ वर्ष तक स्वस्थ जीवन जीनेवाले स्वयं उनके गुरुदेव तथा ऋषि-मुनियों के अनुभवसिद्ध ये प्रयोग अवश्य करने चाहिए ।

चीनी : सफेद जहर
नपा-तुला गुड़ : स्वास्थ्य के लिए अमृततुल्य

ब्रिटेन के प्रोफेसर जॉन युदकिन ने चीनी को 'सफेद जहर' का नाम दिया था । उन्होंने अनेक प्रयोगों द्वारा सिद्ध करके बताया कि : 'मानव शरीर के लिए जरूरी शक्कर फल, अनाज एवं सब्जियों द्वारा प्राप्त हो जाती है । चीनी द्वारा शक्ति मिलने की मान्यता मिथ्या है ।'

चीनी से हृदयरोग बढ़ता है, दाँतों एवं मसूढ़ों के रोग पैदा होते हैं । चीनी लार के साथ मिलकर मुँह में जो एसिड बनाती है वह दाँतों की ऊपरी पर्त को नष्ट करके उन्हें सड़ाने में सहायक होता है ।

अधिक चीनी खाने से 'हाइपोग्लुकेमिया' नामक रोग होंता है । इसके दुष्प्रभाव से शरीर में दुर्बलता आती है । भूख लगने पर भी भोजन करने की इच्छा नहीं होती तथा कभी-कभी रोगी काँपकर बेहोश भी हो जाता है ।

अमेरिका में हाल ही में हुए एक शोध से पता चला है कि जो व्यक्ति अधिक मात्रा में चीनी का सेवन करते हैं, उन्हें बड़ी आँत का कैन्सर होने की अधिक संभावना होती है । कैन्सर ही नहीं अपितु चीनी अन्य कई रोगों का कारण भी है । अतः इसके सेवन पर नियंत्रण बहुत आवश्यक है । चीनी के स्थान पर रसायनों के मिश्रण से रहित शुद्ध गुड़ का उपयोग स्वास्थ्य के लिए अच्छा है ।

[साँईं श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र, जहाँगीरपुरा, वरियाव रोड, सूरत ।]

सद्गुरुदेव की पहली महकती कृपा

गुरु व सद्गुरुदेव में कितना फर्क होता है यह उनकी कृपा से ही पता चलता है। प्रारब्धवश मैं बदनसीबी की ऐसी दलदल में फँस गया था कि मौत और सिर्फ मौत ही आँखों के सामने नाच उठती थी। 'जब मरने के अतिरिक्त कोई चारा ही नहीं, तो जितना शीघ्र यातना व घुटनभरी जिन्दगी से छुटकारा मिल जाय उतना ही अच्छा है...' ऐसा सोचकर १० जून, १९९९ को मैं घर से निकल पड़ा आत्महत्या करने को किसी सुनसान जगह की ओर।

गाँव से तीन किलोमीटर दूर उदयपुर पहुँचने पर एक मित्र मिला और **'ऋषि प्रसाद'** मासिक पत्रिका हाथ में थमाकर बोला : ''नारायणजी ! तुम्हें मेरी कसम है। आज ही यह पत्रिका पढ़ना।'' न जाने किस प्रेरणा और प्रभाव से अनमने मन से पास में ही स्थित एक शिवमंदिर में बैठकर **'ऋषि प्रसाद'** पढ़ने लगा। ज्यों-ज्यों पढ़ता गया, मन की शून्यता में बापू की छवि उभरने लगी। पत्रिका समाप्त होते-होते यूँ लगा कि जैसे बापू मुझसे कह रहे हैं कि : 'मेरे पास आ जा... आ जा... आत्महत्या मत कर।'

१८ जून, '९९ को झाड़ोल गाँव के मोहनजी प्रजापत मेरे पास आये और उन्होंने मुझसे कहा :

''७ जुलाई को गुरुपूर्णिमा पर्व पर श्री आसारामजी बापू के आश्रम, अहमदाबाद चलना है।'' यह सुनकर मैं अवाक् रह गया ! गुरुपूनम पर्व पर परम दयालु-कृपालु सद्गुरुदेव के दर्शन हो गये। मौत का विचार, घुटन, तड़प न जाने कहाँ लुप्त हो गये ! मन में उत्साह से जीवन जीने का भाव उमड़ा। इस तरह दया के सागर, जीवनोद्धारक बापू की पहली कृपा पाकर मैं धन्य हो गया !

इस प्रकार इस 'ऋषि प्रसाद' एवं पूज्य बापू के साहित्य व सत्संग मेरे जैसे कितने ही लोगों का मार्गदर्शन कर रहे हैं इसकी कल्पना नहीं कर सकते।

- नारायण कुमार

बेदला, जि. उदयपुर (राज.).

*

'श्रीआसारामायण' पाठ से नेत्रज्योति मिली

इस वर्ष दिनांक : १० जनवरी २००० को मेरा नौ वर्षीय पुत्र निखिल सन्नी दूसरी बार बेहोश हो गया। इसके कुछ ही दिनों बाद वह अपनी नेत्रज्योति खोने लगा। हमने काठमाण्डू स्थित नेपाल के सबसे बड़े 'त्रिभुवन विश्वविद्यालय शिक्षकीय अस्पताल' में उसकी जाँच करवाई। जाँच की रिपोर्ट आने पर परिवार के हम सभी लोग बालक के अंधकारमय भविष्य के दुःख में डूब गये। रिपोर्ट के अनुसार उसे 'ऑप्टिक एट्रोपी' नामक रोग हो गया था। इस रोग से पीड़ित व्यक्ति लगातार अपनी नेत्रज्योति खोता चला जाता है और अंत में पूर्णतः अंधा हो जाता है। जाँच के समय उसकी दृष्टि बहुत मंद हो चुकी थी तब डॉक्टरों ने भी कह दिया कि इसका शेष जीवन अब अंधत्व में ही बीतेगा।

इसके बाद हमने नई दिल्ली स्थित भारत के प्रसिद्ध अस्पताल 'अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान' में निखिल की जाँच करवाई। परन्तु यहाँ की जाँच के भी पूर्ववत् परिणाम निकले तथा डॉक्टरों ने उसके रोग को असाध्य करार दिया।

हमने परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू से मंत्रदीक्षा ली हुई है। दिनांक : १३ मई को पूज्यश्री से दीक्षित कुछ साधक गुरुभाई मेरे दिल्ली स्थित घर पर आये। हम सभी ने मिलकर पूज्य बापू की जीवनलीला की पद्यमय रचना 'श्रीआसारामायण'

के १०८ पाठ किये।

दूसरे दिन १४ मई को एक महान् आश्चर्य ! सभी चकित एवं गद्गद् हो गये ! क्योंकि मेरे पुत्र की नेत्रज्योति वापस आने लगी। जब डॉक्टरों के पास उनकी खुद की जाँच-रिपोर्ट तथा अपने पुत्र को ले गये तो वे फटी आँखों से देखते ही रह गये क्योंकि चिकित्सा विज्ञान में 'ऑप्टिक एट्रोपी' का कोई इलाज नहीं है। अंततः डॉक्टरों ने कहा :

''वह परमात्मीय प्रकाश जो विज्ञान से भी परे है, उसी ने आपके पुत्र को फिर से नेत्रज्योति प्रदान की है।''

जिस दिन हमने 'श्रीआसारामायण' का पाठ किया उस दिन से हमने निखिल को कोई भी दवाई नहीं दी। अब वह बिल्कुल स्वस्थ है। उसकी दृष्टि भी सामान्य अवस्था में पहुँच गई है।

यह परम पूज्य श्री सद्गुरुदेव की कृपा है जिससे मेरे पुत्र का लाइलाज रोग भी स्वयं मिट गया। उसे एक नवीन जीवन मिला।

'श्रीआसारामायण' के अंत में एक पंक्ति आती है :

एक सौ आठ जो पाठ करेंगे,

उनके सारे काज सरेंगे।

इस पंक्ति के महान् सत्य का मैंने प्रत्यक्ष अनुभव किया है। जिनकी जीवनलीला का १०८ बार पाठ करने मात्र से ऐसा अलौकिक दिव्य परमेश्वरीय लाभ होता है उन पूर्ण की कृपा जिन भाग्यशालियों पर बरसती है उन्हें क्या मिलता है इसे तो वे ही जान सकते हैं।

ऐसे सर्वहितैषी सरल सद्गुरुदेव के श्रीचरणों में मेरा पूरा परिवार नतमस्तक है... - *संजीव गुप्ता*

१४/४, रानीघाट रोड, वीरगंज (पारसा), नेपाल।

*

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ९५ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया सितम्बर २००० के अंत तक अपना नया पता भिजवा दें।

अमदावाद आश्रम : १३ जुलाई से १३ अगस्त। सतत एक माह तक पूज्य बापूजी के सान्निध्य व ध्यान की गहराइयों में प्रत्यक्ष अनुभूति के प्रयोग से आश्रम में अलौकिक वातावरण बना रहा। प्रतिदिन शाम को अंतर्यात्रा ध्यान के प्रयोग होते रहे।

कुंडलिनी योग के ज्ञाता, आत्मारामी संत पूज्य बापूजी ने इस एक महीने में दूर-सुदूर से आये हुए असंख्य श्रद्धालु साधकों एवं आश्रमवासी साधकों को आत्म-विश्रांति की कला सिखाकर ध्यान की गहराइयों की यात्रा कराते हुए अलौकिक अनुभूतियों से संपन्न किया।

इन सत्संग की शृंखला में व्रत-उपवास-नियम-जप-ध्यान-ब्रह्मचर्य एवं पूर्ण मनोयोग से निष्काम सेवा का रहस्य बताकर व्यवहार में कुशल और अनासक्त रहते हुए पारमार्थिक ऊँचाइयों के शिखर पर आसीन होने की अगणित कुंजियाँ पूज्य बापूजी ने बतायीं।

ईसनपुर (अमदावाद) : श्री सुरेशानंदजी के द्वारा दिनांक : ११ से १३ अगस्त तक चलनेवाले त्रिदिवसीय सत्संग-कार्यक्रम की पूर्णाहुति पूज्यश्री के सत्संग-प्रवचन से हुई। ईसनपुर समिति की वर्षों की माँग पूर्ण हुई।

बील आश्रम (वड़ोदरा) : पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में १४ एवं १५ अगस्त को दो दिवसीय पूर्णिमा दर्शन एवं रक्षाबंधन सत्संग-महोत्सव संपन्न हुआ। देश के दूर-दूर क्षेत्रों से आये हुए पूनम व्रतधारी साधकों ने पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग से साधना के नये सूत्र प्राप्त किये। लाखों दिल आनंदित हुए... लाखों आँखें उल्लसित हुई। हर्ष और प्रभुप्रेम से छलकीं उन प्रभु-प्यारों की आँखें। कैसा है प्रेमाभक्ति

का मार्ग ! प्रेमास्पद को पहनाकर आभूषण प्रेमी होते हैं पावन और उनके मनोरथ-मनौतियाँ पूर्ण होती हैं, फलती हैं। बापू को आवश्यकता न होने पर भी प्रेमियों के दिये हुए वस्त्र पहनकर वे उन्हें तृप्त-संतुष्ट करते हैं, जैसे माता-पिता बालकों की तृप्ति-संतुष्टि से प्रसन्न होते हैं ऐसे पूज्यश्री भी अपने साधक-साधिकाओं की तृप्ति-संतुष्टि और आध्यात्मिक उन्नति देखकर विशेष छलकते हैं। पूज्य गुरुदेवश्री ने शंख-ध्वनि के अनेक लाभों की जानकारी दी तथा सभी आश्रमों में त्रिकाल संध्या के समय शंख-ध्वनि करने की आज्ञा दी।

साधना-अनुष्ठान की सफलता व भावी विघ्न-निवारण के लिए पूज्यश्री ने **'श्री संस्कार मंत्र'** प्रदान किया। अनुष्ठान के प्रारंभ में इसकी १० माला कर लेने से साधना निर्विघ्न संपन्न होती है। इस संबंध में विशेष एवं विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए **'रक्षाबंधन महोत्सव २०००'** नामक वीडियो-ऑडियो कैसेट देखी-सुनी जा सकती है।

सूरत आश्रम : २१ से २३ अगस्त तक के त्रिदिवसीय 'भक्ति-ज्ञानवर्षा' के अंतिम दिन श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के उपलक्ष्य में ऐसे सात्त्विक, सुंदर एवं मनमोहक कार्यक्रम आयोजित हुए कि जिनसे वहाँ उपस्थित श्रद्धालुओं के मन-बुद्धि में सहज ही भक्ति, मधुरता, समरसता, आनंद व ईश्वरीय आनंद के भाव-विचार प्रकटने एवं पल्लवित-पुष्पित होने लगते थे। जन्माष्टमी के महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम में युग के अनुसार व्यवस्था की गई। विशाल पंडाल में चहुँओर घूमनेवाली डोली बनाई भक्तों ने। विशाल भक्त-समूह को नजदीक से दर्शन और मक्खन-मिश्री के माधुर्य के साथ पूज्यश्री की नूरानी निगाहों का प्रसाद प्राप्त हुआ। भव्य पुरुषार्थ किया भक्तों ने। सफलमनोरथ हुए सत्संगी। देश भर में इस प्रकार की जन्माष्टमी शायद पहली ही हुई।

आकाशमार्ग में डोलती हुई डोली... मक्खन मिश्री की होली। जो मौजूद थे वे इस महफिल के मजे से कितने पवित्र व उन्नत हुए होंगे, वे ही जानें। सराहना की गई सुंदर व्यवस्था की। भिन्न-भिन्न जगह पर मक्खन-मिश्री, दही आदि की मटकियाँ... यंत्र की डोली में घूम-घूमकर विशाल भक्त-समूह को नजदीक से दर्शन... कृष्ण-कन्हैया के मधुर प्रसंग और मधुर ध्यान से इस अशांत युग में भी शांति-सुख का प्रत्यक्ष अनुभव करके धनभागी होनेवाले भक्तजन... वाणी वर्णन नहीं कर सकती। कलम की ताकत किनारा कर रही है। कहा भी न जाय, चुप रहा भी न जाय। सुसज्जित एवं स्वचालित डोली में समलंकृत वेश-भूषा में विराजमान पूज्यश्री... 'नंद **घर आनंद भयो... जय कन्हैयालाल की...**' इस लोकप्रिय गीत की अनुगूँज... कृष्ण-कन्हैया के प्रिय वाद्य बाँसुरी की मधुर धुन... प्रेमाभक्ति में सराबोर भक्तजनों का सहज-स्वाभाविक एवं बालवत् नृत्य और गान तो कभी-कभी ध्यान की गहराइयों में अवगाहन करते हुए उनका स्वशासित विशाल समूह... ऐसे अपने निर्दोषहृदय प्यारे भक्तों के बीच स्वचालित डोली से पहुँचकर उन्हें निकट से आशीर्वचन एवं दर्शन देकर आनंदित करते हुए पूज्यश्री... मक्खन-मिश्री से भरी हुई तथा विशाल मंडप में सिकहर की भाँति यत्र-तत्र टँगी हुई मटकियों को रस्सियों के माध्यम से दूर से ही फोड़ने का पूज्यश्री का मनमोहक ढंग और उन मटकियों पर मक्खन-मिश्री के लिए टकटकी लगाये हुए भक्तगण... ये इस महोत्सव के मुख्य आकर्षण रहे। इस पूरे रसमय वातावरण को देखकर कृष्ण-कन्हैया की उन रासलीलाओं का सहज ही स्मरण हो आता था जो उन्होंने आज से पाँच हजार दो सौ छब्बीस वर्ष पूर्व वृंदावन की धरती पर रची थीं।

उस समय की अपूर्व भावमय, माधुर्यमय, आनंदमय एवं लीलामय अलौकिक झाँकी का वर्णन शब्दों में कहाँ तक व्यक्त किया जाय ? जिसने उस दृश्य का दर्शन किया उसीने उसके आनंद का अनुभव किया।

'समस्त विश्व के युवावर्ग भी मेरे हैं...'

देश के युवावर्ग को तेजस्वी-ओजस्वी बनाने की दिशा में पूज्य बापू के मार्गदर्शन में देशव्यापी 'युवाधन सुरक्षा अभियान' चलाया जा रहा है,

जिसका व्यापक स्वागत समाज के विभिन्न वर्गों द्वारा किया गया है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की उक्ति को चरितार्थ करते हुए पूज्यश्री ने यहाँ कहा :

''इसे शीघ्र ही विश्वव्यापी अभियान का रूप दिया जायेगा। केवल भारत के युवक ही नहीं बल्कि समस्त विश्व के युवावर्ग भी मेरे हैं।''

कुछ लोगों का मत है कि : 'विश्व में एक ही मजहब... एक ही धर्म की स्थापना होनी चाहिए...' उनके इस मत को अपने स्वार्थ का ख्याली पुलाव बताते हुए धर्मनिष्ठ पू. बापूजी ने कहा :

''कोई व्यक्ति स्वर्ग से आया है तो कोई नरक से, कोई पिछले जन्म का साधक है तो कोई महाभोगी। अतः उन सभी का एक ही मजहब, एक ही धर्म, एक प्रकार की साधना व प्रार्थना होना असंभव है। लेकिन व्यक्ति चाहे किसी भी धर्म का हो, भगवान श्रीकृष्ण का उपदेश सबके लिए उपयोगी है। धर्मान्तरण की अंधी दौड़ के लिए जाल बिछाकर लोगों को गुमराह करना एक बात है और जो जहाँ है वहीं वह विकसित हो, सुखी हो, आनंदित हो इसका वास्तविक कल्याणकारी मार्गदर्शन करना अलग बात है। विश्वमानव का ऐसा कल्याण हो यही सभी की माँग है। शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न व बुद्धि में समता का सुख सभी के लिए उपयोगी है। स्वस्थ, सुखी व सम्मानित जीवन सभी जीना चाहते हैं। ऐसा जीवन जीने की युक्तियाँ जान लो और प्रयोग कर लो।''

जन्माष्टमी महोत्सव पर पूज्यश्री के पावन करकमलों द्वारा हिन्दी एवं गुजराती में नई पुस्तक **'श्राद्ध-महिमा'** एवं श्री सुरेशानंदजी के भजनों की एक नई ऑडियो कैसेट **'श्री गुरुचालीसा'** का विमोचन हुआ।

बापू ने आखिर योगभूमि भारत को पसंद किया

संयुक्त राष्ट्रसंघ (U. N. O.) ने विश्वशांति शिखर सम्मेलन (World Peace Summit) में अनेक संतों को आमंत्रण दिया। उसमें सर्वप्रथम नाम पूज्य बापूजी का था। विश्व-प्रसिद्ध इन महापुरुष को बुलाने का उनका प्रयास फिर-फिर से होता रहा। बापूजी ने श्री सुरेशानंद ब्रह्मचारी को अपना प्रतिनिधि बनाकर वहाँ भेजा है।

श्रावण की एकांत विश्रांति, झाड़ोल के आदिवासियों को अन्न-वस्त्र-बर्तन आदि देने का संकल्प और पूनम व्रतधारियों की तपस्या को ध्यान में रखते हुए पूज्यश्री विदेश नहीं गये। उन्होंने दिनांक : १३ से १७ सितम्बर तक रतलाम में कार्यक्रम दे ही डाला। हालाँकि संयुक्त राष्ट्रसंघ का आमंत्रण ४-५ माह पहले से आया था। सभी संतों में सर्वप्रथम नाम पूज्यश्री का छपा था। साधकों ने यह देखा और वे प्रसन्न हुए।

नाम प्रथम छपे, बाद में छपे या न छपे... मानवता की सचमुच में सेवा चाहनेवाले बापूजी ने वहाँ तो श्री सुरेशानंदजी को भेजा और स्वयं भगवान के अवतारों की भूमि, ऋषि-मुनियों की भूमि, योगभूमि भारत में ही रहे... भोगभूमि विदेश में नहीं गये।

पूज्य बापू के सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
१ से ३ सितम्बर	झाड़ोल (राज.)	सत्संग कार्यक्रम	सुबह ९ से ११ शाम ३-३० से ५-३०	झाड़ोल (फलासिया), जि. उदयपुर (राज.).	२२३१, २२७१, २३४४, २२१४.
७ से ९ सितम्बर	सलुम्बर (राज.)	सत्संग कार्यक्रम	सुबह १०-३० से १२-३० शाम ३ से ५	सीनियर हायर सेकेण्ड्री स्कूल ग्राउण्ड, सलुम्बर, जि. उदयपुर (राज.).	(०२९०६) ३२०८७, ३००७९, ३२३३७, ३२३२७.
१३ से १७ सितम्बर	रतलाम (म. प्र.)	सत्संग कार्यक्रम एवं पूर्णिमा दर्शन	-	स्टेडियम के पास, रतलाम (म. प्र.).	३२३२९, ३१७३८, ३५७३७.
२१ से २४ सितम्बर	कोटा (राज.)	-	-	-	-

पूर्णिमा दर्शन : १३ सितम्बर, रतलाम में।
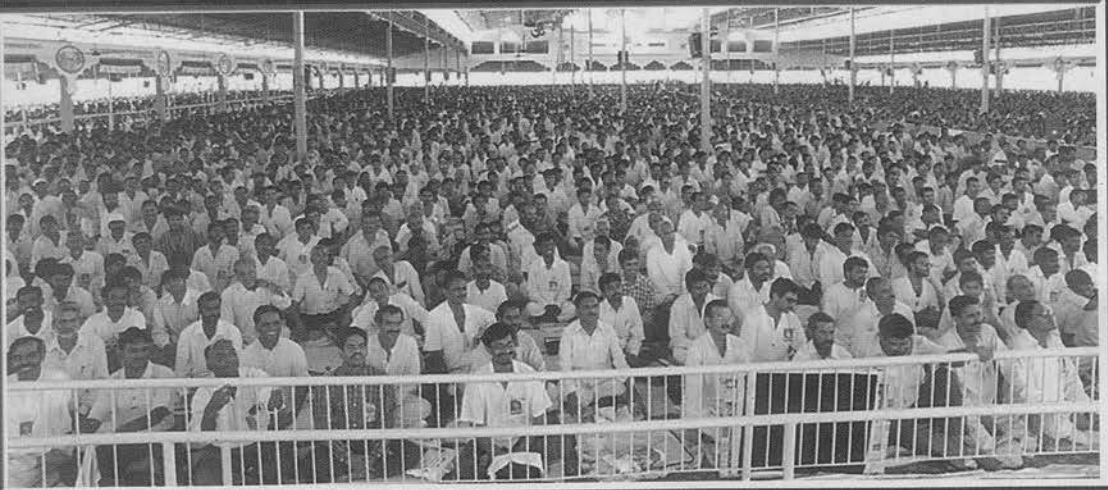
जन्माष्टमी का शुभ अवसर आया, हर साधक का मन हर्षाया। दर्शन, सत्संग, माखन देकर गुरुवर ने अमृत बरसाया॥
सूरत आश्रम में पूज्यश्री की अमृतवाणी का मंत्रमुग्ध होकर रसपान कर रहे लाखों-लाखों श्रोतागण।